Digitized by eGangotri

तुलाराम शास्त्री

अमृतलाल नागर

CC-0. In Public Domain. Fundi

Digitized by eGangotri

स्कैन्ड / Scanned

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

तुलाराम शास्त्री

(अमृतलाल नागर)

Sri Pratap Singh
Library
Srinagar.

स्कैन्ड / Scanned

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

ग्रन्थ संख्या—८६

प्रकाशक तथा विक्रेता
भारती भण्डार
लीडर प्रेस, इलाहाबाद

acc : no: 14461
Rs 1-0-0
206

प्रथम संस्करण

मूल्य—१)

सं०—'९८,

Sri Pratap Singh
Library
Srinagar.

मुद्रक
पं० कृष्णाराम मेहता
लीडर प्रेस,
इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

हिन्दी प्रेमी

सेठ श्री रामनाथ जी डागा
बीकानेर

को

सप्रेम

—अमृतलाल नागर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

कहानियाँ

१	तुलाराम शास्त्री	...	पृष्ठ	१—९
२	गौने की तलब	...	,,	१०—१८
३	क़यामत का दिन	...	,,	१९—३४
४	जुलाब की गोली	...	,,	३५—४१
५	छापे के हुरूफ़	...	,,	४२—४९
६	बङ्गाली वैष्णव	...	,,	५०—५९
७	मुंशी बख़्तावर लाल	...	,,	६०—६९
८	भौजी के कचालू	...	,,	७०—८५
९	गोरख धंधा	...	,,	८६—१०१
१०	राजा-रानी और संतान	...	,,	१०२—१०९
११	नवाबी चक्कर	...	,,	११०—११९
१२	मुंशी घिर्राऊलाल	...	,,	१२०—१२८

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

कहानी के सिलसिले में एक लतीफ़ा याद आ गया। सुनिए:—

एक सिविलियन साहब थे, ताज़े-ताज़े विलायत से आये हुए। बेचारे हिन्दुस्तानी भाषा न समझ सकने के कारण बड़े परेशान थे। साथ ही अपने हिन्दुस्तानी 'बेअरर' से भी इसी कारण तंग आ चुके थे।

एक दिन साहब के एक और सिविलियन मित्र आये। साहब ने अपना रोना गाया। दोस्त ने एक नेक सलाह दी—'जब आपको दरवाज़ा बन्द करवाना हो तो कहिए, There was a banker और जब खुलवाना हो तो, There was a cool day।'

मगर मुश्किल तो यह है कि न तो हम ही सिविलियन साहब हैं और न हमारे तुलाराम शास्त्री पेटी-चपरासवाले 'बैरा'। बेचारे देहाती ठहरे, मुझे बजाय 'हुज़ूर' के 'भैया' कहनेवाले। और मैं भी उन्हें 'डैम फ़ूल' न कह 'शास्त्री' 'सास-तेरी' अथवा 'तुलारामजी' कहकर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

सम्बोधन करता हूँ। मेरा बड़ा लड़का भी अक्सर अपने दोनों चचाओं की देखादेखी, लहजे से उन्हें आवाज़ देता है—'तू-ला-रामजी-रे!'

शास्त्रीजी ज़ात के 'गुड़िया' कहार हैं। सोलह का सिन है। आज पाँच वर्षों से हमारे यहाँ काम कर रहे हैं। तब से अब तक उनकी हुलिया काफ़ी तौर पर बदल चुकी है। घुटी खोपड़ी के बजाय अब सिर पर अँगरेज़ी फ़ैशन के बाल हैं, जिनमें रोज़ 'भैया' की चमेली के तेल की शीशी से, चुपके से, ज़रा-सा तेल निकालकर चुपड़ा जाता है। और अब तो आप बीड़ी से भी शौक़ करने लगे हैं।

हाँ, उनकी एक विशेषता अब भी अपरिवर्तनशील है—मुस्कराहट। चौबीसों घण्टे आपके सामने के दो दाँतों के बीच का क़ुदरती ठूँठ मुस्कराया ही करता है।

जी हाँ, लखनऊ आकर उनके पास भी अब एक नन्हा-सा दिल हो गया है। नौटंकी के नगाड़ों ने उन्हें 'ज़हरे-इश्क़' का क़ाफ़ी परिचय दे दिया है। आप 'मूस' से प्रेम करते हैं।

'मूस' नाम के पीछे भी एक इतिहास छिपा है। 'सोहनी' हमारे यहाँ काम करनेवाली कहारिन की बारह-तेरह बरस की लड़की का नाम है। ख़ूबसूरती में वह 'लैली' से कुछ बीस ही होगी। 'उग्र' जी भी एक बार उसकी ख़ूबसूरती की दाद दे चुके हैं।

एक बार का ज़िक्र है। गर्मी का ज़माना था; दोपहर का वक्त। मैं ठंडक की वजह से तहख़ाने में सोने जा रहा था। नीचे दरवाज़ा खुलने का खटका हुआ। ऊपर से माताजी ने पूछा—'सोहनी, देख तो, नीचे कौन है!'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

नल के पास बैठकर बर्तन माँजती हुई सोहनी ने ज़रा झाँककर, इतमीनान से जवाब दिया—'कोई नहीं, मूस रहा।'

मेरे भारी-भरकम शरीर के लिहाज़ से अगर कोई मुझे 'गणेश' कह दे, तो किसी हद तक सहन भी कर लूँगा, हालाँकि, अक्सर अख़बार में छपी हुई मेरी तस्वीर देख यह तो आप भी दिल पर हाथ रखकर कह सकते हैं कि नाक के स्थान पर मेरे 'सूँड़' नाम की कोई चीज़ बाक़ी नहीं हुई—केवल नाक ही है, अपने साधारण रूप में। मगर सोहनी द्वारा अपने को गणेश महाराज की सवारी क़रार दिये जाते देख मुझे काफ़ी क्रोध चढ़ आया।

उसी दिन से, आपकी दुआ से, मैं तो अमृतलाल नागर ही बना रहा, मगर वह बेचारी सोहनी से 'मूस' हो गई। और अब तो वह इसी नाम से प्रसिद्ध हो चुकी है, यहाँ तक कि उसकी मा भी अब उसे बजाय 'सोहनी' के 'मूसा' पुकारती है।

जी हाँ, तो इसी मूसा से हमारे शास्त्रीजी प्रेम करते हैं। प्रेम करने की प्रणाली भी उनकी अजीब है। छत पर अकेले बिस्तर बिछाती हुई मूसा की पीठ में घूँसा जमाकर, मुस्कराते हुए कहते हैं—'मूसा रानी!'

और मूसा रानी उनके सात्त्विक प्रेम की गहराई न समझकर, फिक फिक रो देती है।

एक बार मैंने भी उनकी यह प्रेम-सम्बन्धी 'थीसिस' जाँचकर उन्हें शास्त्री' की उपाधि दे दी।

सिविलियन साहब न होने पर भी, मेरी सीधी-सादी हिन्दुस्तानी भाषा भी, वह अक्सर नहीं समझ पाते हैं। बस, इसी से परेशान रहता हूँ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

यह तो कह ही नहीं सकता कि तुलारामजी के पास दिमाग़ ही नहीं है। कभी-कभी छुट्टी न मिलने पर, चचा के दस्तों की तीमारदारी का बहाना कर वह रात में नौटंकी देखने जाते हैं ; कभी अपनी मौसी की सास के दर्शन करने जाकर वह बकरी-बन्दर का नाच भी देख लेते हैं।

एक बार, पैर दबवाते वक्त, मैंने उन्हें ठीक तरह से एड़ी की 'चुटकी' दबाने को कहा। उस तरह चुटकी दबाने से दबानेवाले के अँगूठे पर काफ़ी ज़ोर पड़ता है। शास्त्रीजी एक बार उस तरह की चुटकी दबाना समझकर भी फिर भूल गए ; और बाद में, मेरे लाख बार समझाने पर भी उस तरह से चुटकी दबाना सीख न पाये। Some thing is better than nothing के ख़याल से मैंने संतोष कर लिया।

पैर दबाने से छुट्टी पाकर, थोड़ी देर बाद, तुलारामजी वहाँ से चले गये। शाम का वक्त था, माताजी खाना पकाने में दत्तचित्त थीं और मेरी अन्धी दादी उन्हीं के पास रसोई-घर में बैठी हुई बातें कर रही थीं। दोनों भाई घूमने चले गये थे। उस वक्त कोई ख़ास काम था नहीं। तुलारामजी ऊपर छत पर चले गये। मैंने समझा, बीड़ी पीने गये होंगे।

थोड़ी देर बाद, संयोग से, मुझे भी सिगरेट पीने ऊपर जाना पड़ा। ऊपर जाकर देखा, तुलारामजी चारपाई पर लेटकर बीड़ी पीते हुए मूसा से पैर दबवा रहे हैं। घूंघट की आड़ में छिपे हुए घासलेट को देख-देखकर चुपके-चुपके प्रसन्न होने की आदत मेरी नहीं; और न

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

आदर्शवाद की पगड़ी पहनकर मैं, बक़ौलशख़्से, ललाइनों के खुले हुए तोंद पर ही, मन ही मन मरता हूँ। 'आध्यात्मिक' प्रेम या प्रेमिका से भी मुझे चिढ़ है। परन्तु, उस समय छिपकर ही शास्त्रीजी का यह स्वर्गीय वैभव देखने की इच्छा हुई।

किवाड़ की आड़ में खड़े होकर मैंने देखा शास्त्रीजी मूसा की खोपड़ी पर एक प्रेम-पूर्ण तमाचा रसीद कर फ़रमा रहे थे—'गदही अस नाहीं—अस !'

इसके बाद उन्होंने चुटकी दाबने की विधि बताई।

तीन बार भरसक चेष्टा करने पर भी मूसा उस तरह चुटकी न दबा सकी। तंग आकर कहने लगी—'हमते अइसि न बनिहै।'

दूसरी बीड़ी जलाकर, इतमीनान से धीरे-धीरे मुस्कराते हुए कहा—'जरा कोशिश करौ। बड़ा नीक लागत अहै। हाँ, दबाओ तौ मूसा रानी !'

चौथी बार प्रयत्न करते हुए मूसा रानी ने जिज्ञासा की—'ई रोजु रोजु नवा-नवा कैदा कहाँ ते सीखि आवत हौ, हो !'

बीड़ी का क़श खींचते हुए शास्त्रीजी ने गम्भीरतापूर्वक उत्तर दिया—'भैया ऐसनै दबवावत अहैं।'

आग को देखकर आग भड़कती है। सोचने लगा, अगर मेर श्रीमतीजी बजाय मेरे बच्चों की मा होने के मेरी प्रेमिका रही होतीं तो इसी तरह पैर दबवाता। मगर यह सम्भव न होने के कारण मैं शास्त्री जी का यह सुख फूटी-आँखो भी न देख सका।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

दूसरा कारण यह भी था कि बीड़ी को देखकर सिगरेट पीने की तलब और भी ज़ोरों से भड़क उठी थी। इसलिए धड़धड़ाते हुए किवाड़ खोले। शास्त्री जी चौंककर उठ बैठे और मुस्कराते हुए तकिया पर ग़िलाफ़ चढ़ाने लगे। मूसा ने मुस्कराकर छत पर पानी छिड़कना शुरू कर दिया।

उसी दिन की बात है। रात के साढ़े आठ बजे थे। मैं घर में एक ज़रूरी काम बता, कानपुर जाने का बहाना कर, मसान में चुड़ैल सिद्ध करने जाने की सोच रहा था। सिद्धि-प्रयोग में रसायन की आवश्यकता मुझे कभी-कभी महसूस होती है। ग्रेट इंडियन होटल घर से काफ़ी दूर पड़ता था। धोती मैली हो रही थी, धोबी कपड़े धोकर लाया न था। इसलिए मैं धोती में साबुन लगाने बैठा और तुलारामजी के हाथ में दस का नोट रख, एक पर्चे में दवा का नाम लिख कर दे दिया।

मैंने कहा—'थैले में रखकर लाना।'

शास्त्रीजी ने मुस्कराकर धीरे से कहा—'अच्छा!'

मैंने फिर कहा—'और जल्दी आना, समझे!'

तुलाराम गर्दन हिलाकर मुस्कराये। मैं धोती में साबुन लगाने बैठा।

तुलाराम फिर पलटे, पूछा—'भैया!'

मैंने झुँझलाकर कहा—'क्या है रे? अभी तक गया नहीं?'

शास्त्रीजी बुत की तरह चुप।

मैंने फिर कहा—'क्या बात है?'

तुलारामजी ने डरते डरते पूछा—'भैया, क्या लायें?'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

मैं खीझ उठा, बोला—'अबे लायेगा क्या, मेरा सिर? जाके दवाई ले आ।'

तुलाराम हाथ में नोट और परचा लिये हुए फिर चुप।

मैंने ग़ुस्से में भरकर कहा—'अब यहाँ क्यों खड़ा है?'

'भैया, इन्दरचन्द कम्पनी से ले आवें?'

हद हो गई थी। एक बार क़ायदे से, ग्रेट इंडियन होटल का पता बता चुका था। इसलिए बेहद ग़ुस्सा चढ़ आया। उस ग़ुस्से में मेरी सूरत, बक़ौल पं॰ बनारसीदासजी चतुर्वेदी के, महामना पण्डित श्रीकृष्ण दत्तजी पालीवाल की तरह, रीछ-सी हो गई। मैंने चीख़ कर कहा—'अबे जाता है या नहीं--ग्रेट इंडियन होटल। और जल्दी आना, मुझे रेल पर जाना है समझा? भाग यहाँ से।'

शास्त्रीजी चले गये।

मैंने धोती में साबुन लगाकर उसे सुखा दिया। उसके बाद अपने मैले चेहरे की सफ़ाई की। कपड़े पहने और ग़ज़ल गुनगुनाता हुआ इन्तज़ार करने लगा।

नौ बजे, साढ़े नौ, दस भी हस्ब-मामूल बज गये। मगर हज़रत का कहीं पता नहीं।

छोटे भाई ने पूछा—'भाई साहब, आप तो कानपुर जा रहे थे न?'

मैंने झुँझलाकर कहा—'जा रहा था के क्या मानी? अब भी जा रहा हूँ।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

'मगर अब तो आपको गाड़ी मिल नहीं सकती। क्या किसी चीज़ का इन्तज़ार कर रहे हैं?'

मैंने मुँह फुलाकर कहा—'तुला को दिल के दर्द की दवा लाने भेजा था! अभी तक आया नहीं, कमबख़्त। ग्रेट इंडियन—'

होटल कहते कहते रुक गया। वरना वह पूछ ही बैठता—'वहाँ दिल के दर्द की दवा कहाँ?'

फिर भी उसने पूछा—'ग्रेट इंडियन क्या?'

मैंने कहा—'ग्रेट इंडियन मॅडिकल स्टोर्स। क़ैसरबाग़ के चौराहे पर अभी नया ही खुला है।'

'मगर इन्दरचन्द कम्पनी से क्यों नहीं मँगा ली?'

'वहां यह दवा इस वक्त़ नहीं है।'

'तो और कहीं पासवाली दूकान से मँगा लेते। आपने भी तो उसे लंका के छोर पर भेज दिया।'

मैंने झुँझलाकर उत्तर दिया—'यहां कहीं भी यह दवा अच्छी नहीं मिलती।'

भाई चुप हो रहा। मैं इन्तज़ार करते-करते ऊब गया था। कानपुर-वाला बहाना भी अब नहीं चल सकता था। लिहाज़ा, बजाय मसान की चुड़ैल सिद्ध करने के मैंने ग़ुस्से से आग हो, बर्फ़ का ठण्डा पानी पी-पीकर अपने प्रेत को उतारना शुरू कर दिया।

साढ़े दस बजे शास्त्रीजी लौट आये।

'होटल नहीं मिला।' उन्होंने सीधा-सा उत्तर दे दिया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

दूसरे दिन, संयोग से, मैंने सुना, तुलाराम शास्त्री मूसा को छत पर खड़े-खड़े 'शंकरगढ़-संग्राम' के चौबोले सुनाकर कह रहे थे—'काल्हि राति के भैया भेजिन होटल ते दवा लावै खातिर। चौराहा लगे होति रहै कड़ड़ड़धुम—नौटंकी। फेरि को दवा आनै जाय ? नचनिया गावति रहै कि·····'ओय-होय !'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

'अनोखी मेहरिया' 'आशिक़ का रूमाल' और 'सारंगासदावृत्त' का क़िस्सा पढ़ते पढ़ते तुलाराम शास्त्री किसी हद तक साहित्यिक बन रहे हैं, ऐसा मेरा ख़याल है।

मैंने अक्सर देखा है, रात में सब कामों से छुट्टी पाकर शास्त्रीजी अपने बिस्तर पर लेट कर बीड़ी पीते हुए काफ़ी देर तक पढ़ते रहते हैं।

अभी कोई दो महीने गुज़रे शास्त्रीजी का शुभ-विवाह यथाविधि सम्पन्न हो चुका है। तुलाइन शास्त्रिणी और उनकी 'आध्यात्मिक' प्रेयसी मूसारानी में कितना अन्तर है, यह बतलाना तो फ़िलहाल मेरे लिए असम्भव है। केवल कल्पना के आधार पर ही कह सकता हूँ, कि तुलाइन हर बात में मूसा से बीस ही होंगी, उन्नीस नहीं हो सकतीं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

इसका एक कारण है। मूसा जन्म से ही लखनऊ ऐसे शहर में पली-बढ़ी है। गांव की सूरत भी शायद उसने अब तक न देखी होगी।

और तुलाइन ठहरी शुद्ध भारतीय महिला—ठेट गाँव की।

जीवन में दो-दो रोमांचिक घटनायें घट चुकने के बाद शास्त्री जी का 'अनोखी मेहरिया' अध्ययन करना, उनके साहित्यिक होने का सब से बड़ा सबूत है।

अनुभवहीन लेखक पानी के बुल्ले के समान होता है। गुरु-मंत्र देते समय शरत बाबू ने मुझे यह उपदेश दिया था। तब से इसे गांठ में बांध कर लिखता हूँ। हालांकि अक्सर ऐसा करने में मुश्किलें भी पड़ी हैं। मिसाल के तौर पर आजकल 'ख़ुदा का घर' उपन्यास लिख रहा हूँ। जहां तक लिख चुका हूँ, श्रीमती पढ़ चुकी हैं। पूछती हैं, उपन्यास की नायिका 'नूरजहां' के सम्बन्ध में मुझे कहां तक अनुभव-ज्ञान है। उन्हें यह बतलाना भी सांप के बिल में हाथ डालने से कम ख़तरनाक नहीं। अगर सच कह दूँ तो घर में एक 'कोप-भवन' बनवाना पड़े, और झूठ बोलने पर वह यक़ीन ही नहीं करतीं, साथ में मेरा अनुभव वाला दावा भी ख़ारिज होता है।

तुलाराम शास्त्री भी बिना अनुभवी हुए आचार्य कहलाना हिमाक़त समझते हैं, ऐसा जान पड़ता है। इस सिलसिले में वे मेरे पद-चिह्नों का अनुसरण करते हुए उस वक़्त ताज़े अनुभवों का मज़ा लूटते हैं जब सारा आलम अपनी ख़ुदी में मस्त होता है।

अभी कुछ दिन हुए, मेरे छोटे भाई का विवाह था। इसी सिलसिले में एक दिन घर में ढोलक-मजीरे भी ठनके। मैं ऊपर कमरा बन्द

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

कर लेटा हुआ एक कहानी का प्लॉट सोच रहा था। मेरी इच्छा थी कि अपनी इस कहानी में ढोलक-मजीरे और घरेलू-औरतों के गीतों का भी किसी तरह समावेश करूँ। इसी लिए जब कभी किसी नये गीत की कड़ी शुरू होती, मैं अपने कान खड़े कर लेता था।

उसी समय छत पर धमाधम कूदने की आवाज़ सुनी। इच्छा हुई, बाहर जाकर दंगा करनेवाले शैतान लड़कों को डाँटू। तभी तुलाराम जी की आवाज़ सुनी। वह मूसा को सम्बोधन कर रहे थे। मैं रुक गया। दरवाज़े की दरार से बाहर झाँक कर देखा, शास्त्री जी मूसा का हाथ पकड़ कर ठुमुक-ठुमुक नाचते हुए कह रहे थे—'ठीक-ठीक नाचौ, मूसारानी।'

साथ में और ज़ोर से पैर ठुमकाते हुए मूसा हँस कर बोली—'नाचित तौ हन। और कैसे नाचा जाति है?'

आपकी दुआ से, उदयशंकर और शम्भू महाराज से लेकर लखनऊ के भाँड और बनारस की गौनहारिनों तक का नाच देख चुका हूँ। लेकिन इतना सुन्दर और कलापूर्ण-नृत्य अपने जीवन में पहले भी कभी देखा था, इसमें मुझे सन्देह है।

थोड़ी देर बाद नाच एकाएक रुका। नीचे औरतों ने ज़रा देर साँस लेने के बाद एक नई चीज़ शुरू की थी। शास्त्रीजी शायद उसे सुनने के लिए ही रुक गये थे। उन फटे हुए गलों से निकला हुआ वह गीत—'सैयाँ हमारे मिडिल-पास अँग्रेज़ी बिगुल बजाते हैं'—जब मुझे ही अनेकों कोकिला-कण्ठ-वालियों के सुमधुर गलों से निकली हुई सैकड़ों अच्छी से-अच्छी ग़ज़लों से भी ज़्यादा मधुर उस समय मालूम

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

हुआ, तब हमारे शास्त्री जी के 'टेस्ट' का तो कहना ही क्या ? मस्त हो गये। झूम उठे। जब ज़रा भावावेश कम हुआ तो मूसा से बोले—'तुमहू यू गावा करौ।'

मूसा ने कहा—'काहे ?'

'बड़ा नीक लागति है। सैयाँ हमारे निंडिल-पाँस रँगरेजी बिगुल बजाते हैं। गावौ।'

शास्त्री जी इसरार करने लगे। मूसा तन गई। आँखें चढ़ाकर बोली—'धत्।'

'धत् काहे ? ईमा कौनौ बुराई आय ?'

मूसा रानी ने कोई उत्तर न दिया। शरमा कर बैठ गई।

मूसा की चोटी पकड़ कर अपनी ओर बड़े प्रेम से घसीटते हुए शास्त्रीजी ने फिर गाने की फ़रमाइश की।

इस बार मूसारानी ने लज्जायुक्त झुँझलाहट के साथ कहा—'चलौ हटौ, हमते अइसि मुराही न किया करौ।'

तुलाराम शास्त्री मुस्कराकर मदभरी आँखों से मूसा की तरफ़ देखते हुए बोले—'ईमा मुराही का है ? कइसि नीक गीत आय। तुमहूँ गावा करौ !'

कह कर उन्होंने मूसा की पीठ पर हाथ फेरना शुरू किया। मूसा रानी मुग्धा नायिका की तरह गर्दन झुका कर बैठी रहीं।

शास्त्री जी ने फिर प्रेम-पूर्वक कहा—'मूसा।'

मूसा उँगली से ज़मीन कुरेदती हुई बोली—'का ?'

शास्त्री जी ने कहा—'तनुकु गाइ देउ।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

'का गाई ?'

शास्त्री जी ने उल्लास-भरे स्वर में उत्तर दिया—'वहै जौनु नीचे गावा जाति रहै ?'

मूसा ने मुस्करा कर जिज्ञासा की—'का गावा जाति रहै ?'

शास्त्री जी झुँझला उठे। कहा—'अब गउती नाइं हैं। दुनिया भरे क्यार तीनु-पाँचु लगाये हैं। तनुकु गाइ देउ ना—सैयां हमारे निंडिल पाँस।'

दरवाज़े की दरार से मैंने देखा, मूसा ने अजीब अन्दाज़ के साथ आंखें चढ़ाते हुए शोख़ी भरे स्वर में कहा—'काहे गाई ? तुम का हमार सैयां हौ ?'

शास्त्री जी सिटपिटा गये। उत्तर देने के लिए शायद जब उन्हें कुछ भी न सूझ पड़ा होगा तभी उन्होंने झेंप-भरी मुस्कराहट के साथ मूसा की पीठ पर घूँसा मारते हुए कहा—'हैयें हन।'

मूसा ने तड़-पड़ उठ शास्त्रीजी के गाल पर एक करारी चुटकी लेते हुए बड़े लहजे के साथ कहा—'धत् !'

फिर भाग गई।

अगर किसी स्त्री ने कभी मेरे गाल पर चुटकी काटी होती तो बतला देता कि उसमें कितनी तेज़ी होती है। फिर भी मेरा ख़याल है कि मूसा की उस चुटकी में कुछ न कुछ तो तड़प होगी ही। मचल कर तुलाराम बोले—'कहाँ जाति हौ ? हियां आवौ।'

मूसा ने शेख़ी के साथ शहर की सलीस ज़बान में उत्तर दिया—'हम नहीं आते।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

शास्त्रीजी फ़ौरन उठकर उसके पास आये। हाथ पकड़ कर मुलायमियत के साथ कहा—'रिसाय गईं का ?'

मूसारानी ने कोई उत्तर न दिया। शास्त्रीजी उसका हाथ पकड़े हुए फिर छत पर आ बैठे।

उन्होंने फिर पूछा—'तुम का नराज हुइ गईं, मूसारानी ?'

मूसारानी कुछ प्रणय-सिक्त तिनतिनाहट के साथ बोलीं—'गुस्सा न लागी, अत्ती जोर ते मार दिहेउ।'

शास्त्रीजी ने जवाब दिया—'औरु तुमहू तौ अत्ती जोर ते चिकोटी काटि कै भागी रहीं !'

मूसा बोली—'तौ तुम हनि कै घूँसा काहे मारे रहेउ ?'

'तौ तुम गउती काहे नाहीं रहेउ ?'

मूसा फिर झुँझलाहट के साथ उठती हुई बोली—'नाहीं गउबै, जाउ। आपन मेहरारू ते काहे नाहीं जाइ कै गवउते ?'

शास्त्रीजी ने जवाब दिया—'हमार मेहरिया हियाँ ध्वारौ बैठी आय जो जाइकै गवाई।'

शास्त्री जी का जवाब बड़ा माक़ूल रहा। मुझे हँसी आ गई।

मूसा फिर बोली—'तौ जाइ कै बुलाय काहे नाहीं लउते ?'

इस बार शायद शास्त्री जी की बारी थी, ज़रा अकड़ कर बोले—'अब जायेंगे। बुला लायेंगे।'

मूसा शायद कुछ खिसिया गई, ऐसा प्रतीत होता था। उसने पूछा—'कब जैहौ ?'

'जब हमार ख़ुसी होई। तुमका का ?'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

शास्त्रीजी ज़रा अकड़ गये।

मूसारानी चुप हो रहीं।

शास्त्रीजी उल्लास भरे स्वर में कहने लगे—'हमार मेहरिया तुमते खपसूरत आय। काल्हि हम वहिका चिट्ठी लिखे रहन।'

मूसा ने जिज्ञासा की--'का लिखे हौ ?'

शास्त्री जी ने उसी तरह अकड़ कर उत्तर दिया—'जौन भैया छोटी बहू का लिखति हैं, वहै हमहू लिखा है।'

मैं ज़रा कान लगा कर सुनने लगा।

मूसा ने फिर पूछा—'भैया का लिखति हैं ?'

शास्त्री जी ने बड़े लहजे से मुस्कराकर कहा—'भैया लिखिन रहै, पाँड़ेसुअरी। हमहूँ लिखा है।'

मैं अपने दिमाग़ पर ज़ोर डालने लगा। ख़याल आया, दो दिन पहले ही किसी ज़रासी बात पर हम मियाँ बीवी में यों ही कुछ मामूली-सी कहा सुनी हो गई थी। खुट्टी ने सिर्फ़ यहाँ तक ही ज़ोर मारा कि मैंने अपने ड्राइंग-रूम में रक्खी हुई उनकी पुस्तक 'सतीसुचरित्र' ऊपर भिजवा दी। श्रीमतीजी ने इसे अपमान समझा और अपनी आलमारी से मेरी 'नवाबी-मसनद' निकाल कर फेंक दी। थोड़ी देर बाद इत्तफ़ाक़ से कुछ मित्र आ गये। बात ही बात में सिनेमा का प्रोग्राम बन गया। मुझे पैसों की ज़रूरत महसूस हुई। श्रीमती जी को एक प्रेम-पूर्ण पत्र लिखा। आरम्भ में 'प्राणेश्वरी' लिखा था, फिर अपने किये की क्षमा माँगी थी। बाद में दबी क़लम से

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

पैसों की फ़रमाइश की। अन्त में लिखा था, 'तुम्हारा न जाने क्या!'

मालूम होता है मेरा ख़ानगी ख़त ऊपर ले जाते वक्त शास्त्री जी ने सीढ़ी में पढ़ा होगा। इसी से तुलाइन भी 'पांड़े सुअरी' बनी।

मूसा ने फिर जिज्ञासा की—'तौ कब जैहो, मेहरारू का बुलावै ?'

शास्त्री जी अकड़ कर बोले—'बताय तो दिया, जब हमार खुसी होई।'

मूसा शायद और भी कुछ पूछती, लेकिन वैसे ही किसी ने नीचे से शास्त्री जी को आवाज़ दी।

वह अनखना कर उठे और मूसा की तरफ़ देखते हुए मुस्कराये। फिर उसकी पीठ पर घूंसा मारा, और चल दिये।

उसी दिन रात को तुलाराम शास्त्री मेरी माता जी से घर जाने की छुट्टी माँगने लगे। मैं वैसे ही आ गया! माँ ने मेरे सिर पर बला पटकी। मैंने पूछा—'घर जाकर क्या करोगे ?'

शास्त्री जी मुस्करा कर चुप।

मैंने कहा—'अभी तो बीस दिन रह आये हो। अब क्या काम है ?'

शास्त्री जी सिर झुकाये चुपचाप मुस्कराते रहे।

मैंने फिर पूछा—'बोलो, घर में क्या काम है ?'

झेंप-भरी मुस्कराहट के साथ उन्होंने गर्दन ऊपर की ओर उठाये बग़ैर ही धीरे-से कहा—'गौना करै जायेंगे, भैया—'

मैंने कहा—'अबे चौमासे में कहीं गौना भी होता है ?'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

शास्त्री जी खड़े-खड़े मुस्कराते रहे। मैं ऊपर चला आया।

बाद में मेरा छोटा भाई बतला रहा था, उसने पाख़ाने में बैठ कर सुना था, तुलाराम शास्त्री दहलीज़ में खड़े-खड़े अपने दोस्त 'लोकई' से बड़बड़ाते हुये कह रहे थे—'भैया क्यार गउना तौ है चुका है ना। उइ तौ अस अड़ंगा लगौबै करिहैं। हमहू देखि लेइत जो कौनों सार उनके गउना मइहाँ अस बिघन डारे होत।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

क़यामत का दिन

ऐन आधीरात के वक़्त क़ादिर मियाँ को मालूम हुआ कि ख़ुदा-वन्द-करीम ख़्वाब में कह रहे हैं—'अमां क़ादिर, तुम दुनियाँ के भोले-भाले बाशिन्दों को मेरा यह इलहाम सुना दो कि कल जुमेरात के दिन शाम की नमाज़ के बाद मैं आऊँगा, और उसी वक्त तमाम लोगों से मिलकर क़यामत का दिन मुक़र्रर करूँगा।' देखते ही देखते मालूम हुआ कि अल्लाह मियाँ की बड़ी लम्बी सफ़ेद दाढ़ी ख़्वाब को बटोर कर ले गई; और मियाँ क़ादिर की आँख जो पट से खुल तो देखते क्या हैं कि आसमान में एक बड़ा चमकदार तारा टूट रहा था। मियाँ क़ादिर ने चारपाई पर लेटे-लेटे ही कलमा पढ़ा।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

पिछली शाम घर में दुपट्टा रंगने के लिये पीला रंग मंगाया गया था। ख़याल आते ही मियाँ क़ादिर ने झट से उठ कर उसे खोजा और अपना कुर्ता और लुंगी रंग डाली। बाक़ी रात ख़ुदा की इबादत में बिताई, और सवेरे तड़के ही मियाँ क़ादिर पीला कुर्ता और लुंगी पहन कर घर से निकल पड़े।

पाटेनाले के मोड़ पर मियाँ हादी एक हाथ में चिलम लिए बड़बड़ाते हुए आते दिखाई पड़े। वह नानबाई को बात-बात में 'कमीना-साला' कहते हुए चले आ रहे थे। वजह सिर्फ़ इतनी ही थी कि मियाँ नानबाई की दुकान पर जब आप तशरीफ़ ले गये तो उस वक्त वह भट्ठी में दियासलाई दिखा रहा था। उन्होंने चिलम बढ़ा कर आग मांगी। उसने उनकी 'लिक्विडेशन' में आई हुई आँख की शान में चन्द चुने हुए अलफ़ाज़ कह दिए। इस वक्त जो मियाँ नानबाई के लिए अपने प्रेम की उमड़ती हुई दरिया में नालायक, कमीना, उल्लू का पट्ठा वग़ैरा नामों के बड़े-बड़े जहाज़ तैरा रहे थे, यह सब मियाँ नानबाई की ही बातों के तुफ़ैल से था। मगर जो सामने से मियाँ क़ादिर को इस भेस में आते हुये देखा तो बस एकदम बुत बने खड़े रह गये।

'अमां कादिर ! अमां हैं ! अमां किधर चले ?' हादी मियाँ क़ादिर को सिर से पैर तक तीन बार देख गए।

'लाहौलविलाकूवत !' मियाँ क़ादिर ने निहायत नफ़रत के साथ ज़मीन पर थूक कर कहा—'अबे तुझे इसी वक्त टोकना था, कम्बख़त ?'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

'वल्ला ये मजा देखिये। अमां तुम तो बिना बात के बिगड़े जाते हो। भई बात क्या है? अमां इस नाराजी......'

कहाँ तो मियाँ क़ादिर अल्लामियाँ का फ़रमान सुनाने जा रहे थे, और कहाँ कम्बख़्त काना मिल गया और वह भी अलस्सुबह, घर से निकलते ही। झुंझला कर कहा—'ले बस, अब रास्ता छोड़, मनहूस कहीं का। सुबू ही सुबू टोक दिया लेके।'

बस अब हद हो चुकी थी। मियाँ हादी की शान में ऐसे-ऐसे बेहूदा अलफ़ाज कह दिये जाँय और मियाँ हादी ज़हर के कड़वे घूँट की तरह उसे चुपचाप पी जांय, यह ज़रा नामुमकिन-सी बात है। मगर उस वक़्त अगर यह 'नामुमकिन' भी मियाँ क़ादिर के फ़क़ीराना भेस को देख कर 'मुमकिन' हो गया तो कोई ताज्जुब की बात न थी। आप बराबर यह जानने के लिए इसरार करते ही रहे कि आख़िर हज़रत घर-बार छोड़कर इस तरह जा कहाँ रहे हैं।

इधर मियाँ क़ादिर का यह हाल था कि वह उन्हें एक चांटा रसीद करने जा ही रहे थे कि भाई बकरीदी आते हुए दिखाई पड़े। उन्होंने मियाँ क़ादिर को जो इस भेस में देखा तो बस देखते ही रह गये, और इसके बाद मियाँ हादी को इस तरह रास्ता रोक कर खड़े देखा तो मामला कुछ-कुछ समझ में आया। चट से कह उठे—'अमां होगा भी। अब ये तो हुआ ही करता है। भाई, जिस घर में दो बर्तन होते हैं, बजते ही हैं। मगर इस में इतना नराज होने की क्या बात है! अमां, ये तो घर-घर में लगा ही रहता है। ख़ैर, होगा भी।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

चलो हम चल के समझाये देते हैं। आइन्दा भौजी तुम्हें इस तरह.....'

बकरीदी मियाँ क़ादिर को घर की तरफ़ ढकेलने लगे। मियाँ क़ादिर को और भी ताव आ गया। बोले—'कह दिया कि रस्ता छोड़ दो। मगर तुम लोग मानते ही नहीं। खामखां को ताव दिलाये चले जा रहे हो। बेफजूल की बकवास लगा रक्खी है। यहां हमें पार-वाले साईं जी के तकिए तक जाना है।'

'न भाईजान! अमां हटाओ इस झगड़े को। घर-घर में यही होता है। अब कल ही था, मुझसे और तुम्हारी भौजी...'

'देखा, फिर वही? अमां वह बात नहीं, हजार बार कह दिया, लाख बार समझा दिया कि अल्लाह-ताला...'

बुद्धन, अच्छन, जुम्मन—इतनी देर में सभी जमा हो गये। अब भाई बकरीदी समझा रहे थे--'अमां, तो अल्लाह की इबादत करने से तुम्हें कौन रोकता है, भाईजान? घर पर बैठ कर क्या ये सब नहीं कर सकते? अब आप ही इन्हें समझाइये, मियाँ अच्छन साहब। देखिये भला कोई बात भी तो हो। घर में कोई बात हो गई होगी।

'देखिये-देखिये जरी संभल कर जुबान से बात निकालियेगा, मियाँ बकरीदी। कह दिया कि कुछ भी...'

'तो आख़िर बात क्या है? अब ये जो तुम घर-बार छोड़ कर फ़क़ीरी ले रहे हो इसका कोई सबब भी तो होना चहिये, भाई मेरे।'

14461

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

मियाँ अच्छन साहब ने क़ादिर की पीठ पर बड़ी गर्म-जोशी के साथ हाथ फेरते हुये कहा।

मियाँ क़ादिर सचमुच निहायत परीशान हो चुके थे। अच्छन साहब से बड़ी नम्रता के साथ कहा—'वही तो मैं भी अरज करने जा रहा हूँ, बड़े मियाँ। मैंने कहा कि……'

मियाँ क़ादिर की बात शुरू भी न होने पाई थी, कि मियाँ बुद्धन बोल उठे—'अब तुम बताओगे क्या ? वह तो सुनी-सुनाई बात है। आखिर इतने आदमी यहां खड़े हैं, कसम खा के भला कोई यह तो कह दे कि हमारे घर में आज तक कभी भी लड़ाई नहीं हुई। अरे भाई, यह तो हुआ ही करता है। अब आप समझिये कि……'

आँखों में आंसू छलछला आए। मारे ताव के चेहरा सुर्ख़ हो गया। एक बार पूरे जोश के साथ अपने को छुड़ा कर मियाँ क़ादिर ने बुद्धन की ओर बढ़ते हुए कहा—'अपनी औक़ात समझ के मुँह से बात निकालनी चाहिए, समझे बुद्धन ! मारे जूतों के खोपड़ी गंजी कर दी होगी। बेईमान कहीं का, बड़ा सुकरात की दुम बना है। चला वहाँ से बताने वाला।'

मियाँ बुद्धन को भी ताव आगया। मारे तेहे के आगे बढ़कर बोले—'ऐसी मुरव्वत की ऐसी-तैसी। अमां तुम्ही देख लो भाई बकरीदी, एक तो मैं समझा रहा हूँ और यह हैं कि…। इस हेकड़ी में न रहियेगा मियाँ, समझे ! वाह अच्छा-खासा स्वांग बना रक्खे है ! ज़री सा घर में झगड़ा क्या हो गया कि चले साहब

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

फकीराना भेस धर कर तमासा दिखाने। अमां ऐसी-ऐसी लन्तरानियां·········।'

ताव में आकर मियाँ क़ादिर ने लपक कर बुद्धन की गर्दन में हाथ डाला, और खोपड़ी पर एक कड़ाकेदार चपत मार उसे ढकेलते हुए कहा—'बड़ा आया है वहाँ से जज साहब का बच्चा बन कर, मियाँ-बीवी का फैसला चुकाने। कह दिया बेफजूल की बातें मत करो। मगर नहीं, खामखां अपनी हेकड़ी दिखाते जाएंगे। बेईमान कहीं का।'

जब तक लोग आगे बढ़कर इन दोनों का बीच-बचाव करें तब तक मियाँ बुद्धन के दो तीन हाथ करारे-करारे पड़ ही गए। वल्लाह, उस वक्त मियां बुद्धन के वह जोश, वह वलवले और वह तेहेबाज़ी देखते ही बनती थी। जी में तो बहुत आया कि लपक कर मियाँ क़ादिर से बदला लें, कई बार गालियाँ देते हुए तेज़ी में आ लाल-पीली आँखों के साथ आगे बढ़े भी, मगर मियाँ क़ादिर के कँडे को देख कर ज़रा सहम जाते थे। दूसरे बीच-बचाव करने वाले भी बहुत से थे। अब लोगों मे चेमें-गोइयां यह होने लगीं कि इस वक़्त क़ादिर मियाँ जोश में हैं अगर फ़क़ीर हो कर चल दिये तो चार बाहर वाले आकर यही थूकेंगे कि मुहल्ले वालों ने रोका तक नहीं।

भाई बकरीदी ने मियाँ अच्छन साहब से कहा--'देखिये बड़े मियाँ, बड़ा गजब हो जायगा जो कादिर चल दिया। कसम खुदा की, वल्ला मैं सच कहता हूँ बड़े मियाँ, कि पूरे मुहल्ले भर के मुँह पर अपने हिसाब जैसे कालिख पुत जायगी। और फिर भाई, सच तो यह

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

है कि आज इसके ऊपर तो कल ख़ुदा न करे हमारे ही ऊपर बीते। और यह तो सब के घर में लगा ही रहता है। मर्द आदमी, किसी बात पर ताव आ गया, घर छोड़ कर चले जा रहे हैं साहब।'

बहरहाल बड़े मियाँ, जुम्मन और बकरीदी ने मिल कर यह तय किया कि क़ादिर को, चाहे कुछ भी हो, घर लौटा कर ले जाया जायगा। बस फिर क्या था, एक हाथ जुम्मन ने पकड़ा एक हाथ बकरीदी ने, कोई पीछे से घेर रहा है, कोई बगल से रोक-थाम कर रहा है, और क़ादिर मियाँ हैं कि तमाम उछल-कूद मचा रहे हैं; इस ले-दे के बीच में इनकी सुनता ही कौन है। किसी तरह उन्हें लोग घर की तरफ़ ले ही चले।

× × × ×

इधर यह हाल कि पास-पड़ोस की तो क्या कहिये, आस-पास के तीन-चार मुहल्लों तक की औरतें मियाँ क़ादिर के घर पर जमा हो गई थीं।

सबसे पहले फ़ातिमा को ही इस बात की ख़बर मिली थी, जब कि मियाँ क़ादिर हादी से उलझ रहे थे। बीबी फ़ातिमा ने झप-से अपना दुपट्टा सँभालते हुए ऊपर छत से अपनी पड़ोसिन ख़ैरातिन को पुकार कर कहा—'ऐ बहन तुम्हें एक बात बताएँ।'

ख़ैरातिन ने रकाबी धोते हुए तुनुक कर जवाब दिया—'ऐ चलो हटो, तुम्हें न तो कुछ काम न धन्धा। बस ले के सुबू-सुबू बातें बनाने बैठ गईं। उँह, ऐसा भी क्या मुआ निठल्लापना!'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

'ऐ नौज बीबी, तुम तो हवा से लड़ती हो । मुझे क्या गरज़ पड़ी थी जो तुम्हें कोई बात सुनाने आती ? वाहरे दिमाग़ ! ज़मीन पर पैर ही नहीं पड़ते बीबी के। मदुआ ज़री लाट साहब की अर्दली में क्या हो गया कि अपने को लाट साहब की बच्ची समझने लगीं ।'

'देख ख़बरदार, जो अबकी मरद-पीर तक पहुँची तो तेरा मुँह ही झुलस दूँगी, हाँ । चुड़ैल की नानी कहीं की ।'

वाक़या है कि अगर अख़्तरी उस वक्त वहाँ न पहुँच जाती तो मुहल्ले में एक अच्छा-ख़ासा हंगामा मच जाता । एक तरफ़ तो लोग मियाँ क़ादिर को मनाने जाते और दूसरी तरफ़ औरतें आपस में तू-तू मैं-मैं कर आसमान सर पर उठा लेतीं । मगर ख़ैर, मौक़े पर अख़्तरी के पहुँच जाने की वजह से तमाशे की सूरत कुछ और हो गई । क़िस्सा यों हुआ कि अख़्तरी जब ख़ैरातिन के यहाँ आग लेने आई तो उसने हांफते हुये, उसे मियाँ क़ादिर के फ़क़ीर हो जाने का हाल बतलाया । ख़ैरातिन फ़ातिमा से लड़ना बन्द कर, एका-एक, अख़्तरी से मियाँ क़ादिर की बाबत बातें करने लगी ।

बीबी फ़ातिमा ने झमक कर कहा—'ऐ बहन वही तो मैं भी इन्हें सुनाने आई थी । लेकिन यह हैं कि सुबू-सुबू कोसा-काटी करने लगीं । ऐ हाँ, ज़री इनके मिज़ाज तो देखो ! ओफ़्फ़ोह हवा से लड़ाई लड़ती हैं ये तो ।'

ख़ैरातिन ने झपाके के साथ दुपट्टा सिर से उतारते हुये, जोश में आ फ़ातिमा की तरफ़ हाथ बढ़ा-बढ़ाकर कहना शुरू किया—'ऐ

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

तुम तो बड़ी नन्हीं-बालीं ! ज़री ईमान से बताओ तो कि मैं किस दिन किस के साथ लड़ी ? मैं तुम्हें बताए देती हूँ बहन, किसी पर झूठी तोहमत लगाना अच्छा नहीं होता।'

अख़्तरी ने बात बदलते हुए कहा—'ये क्या तुम लोग सुबू-सुबू कसीदा काढ़ने बैठ गईं ? फ़ातिमा बहन, अब तुम कोई नन्हीं सी नहीं रही, जो ये सब अच्छा लगे। इस बुढ़ापे में तो ज़री अपनी लल्लो को काबू में रक्खो।'

बीबी फ़ातिमा रो-रो कर कुछ कहने ही जा रही थीं कि बाहर के हंगामे ने तीनों का ध्यान अपनी तरफ़ खींच लिया। मियाँ क़ादिर उस वक्त मियाँ बुद्धन को सबक़ दे रहे थे। क़िस्सा-कोतः यह कि इसी तरह धीरे-धीरे चन्द ही मिनटों में मुहल्ले की तमाम औरतें इकट्ठा होकर मियाँ क़ादिर के मकान पर मिसकौट करने पहुँच गईं थीं। क़ादिर की बीबी उस वक्त इत्मीनान से चारपाई पर बैठी हुई जमुहाइयां और अंगड़ाइयाँ ले रही थी। एकदम से जो मुहल्ले की तमाम औरतों ने मिलकर धावा बोला तो ये घबरा उठी। उधर औरतों ने जो ये देखा कि बीवी न रोती हैं, न बेहोश हुईं और मजे से चारपाई पर पड़ी हुई अँगड़ाइयाँ ले रही हैं, तो आपस में फुस-फुस करने लगीं।

एक ने कहा—'ऐ बहन देखा ? जो ये ऐसी न होतीं तो मर्दुआ घर-बार छोड़ कर ही क्यों जाता ?'

दूसरी ने मुँह बिचकाकर उत्तर दिया—'उँह, ऐसी मुई औरत

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

भी किस काम की जो अपने मरद को यों तकलीफ़ दे। मुँह नोचले ऐसी मुई का तो।'

बूढ़ी ख़ुरशीद ने आगे बढ़ कर कांपती हुई आवाज़ के साथ क़ादिर की बीबी से कहा—'ऐ बेटा, तुम्हें अपनी ज़ुबान ज़री क़ाबू में रखनी चाहिये। ऐसी भी क्या मुई लल्लो कि जो जी में आया निकाल दिया। और हम तो कहते हैं कि भाई, बड़ा ग़मख़ोर है हमारा क़ादिर। जो और कोई होता तो ज़ुबान खींच कर रख लेता। ऐ, अब तुम भी बच्ची नहीं हो, अल्ला के फ़ज़ल से बाल-बच्चे वाली हो, समझदार हो; और क़ादिर भी हमारा कोई निठल्ला नहीं है। तुम को........'

ख़ुरशीद की बात काट, नाक पर उँगली रखते हुये शहज़ादी बोल उठी—'ऐ नौज बीबी, ऐ वो निठल्ला क्यों? सैकड़ों लाखों से अच्छा कमाता है। और यह भी नहीं कि उसे कोई बुरी लत हो। मैं तुझसे सच कहती हूँ बहन, ऐसा समझदार लड़का हमारे मुहल्ले भर में क्या, शहर भर में कोई नहीं।'

फ़ातिमा ने आगे बढ़कर हाथ नचाते हुए कहा—'ऐ है, कोई लाख समझदार क्यों न हो मगर यह रोज़-रोज़ की किचकिच हाय-हाय कोई कब तक सहे? मरद आदमी, ताव में आकर फ़क़ीरी ले ली?'

मियाँ क़ादिर की बीबी इन तमाम बातों को सुन कर एकदम हक्का-बक्का सी हो गई। उसे ख़ाक भी समझ में न आया कि माजरा क्या है। वह बेचारी खड़ी-खड़ी इन औरतों के मुँह की तरफ़ देख

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

रही थी, और वे थीं कि सवाल पर सवाल कर इस के छक्के छुड़ा रही थीं। इस लानत-मलामत से घबरा कर आख़िरकार क़ादिर की बीवी सर पर हाथ रख रोने बैठ गई।

फ़ातिमा ने आगे बढ़कर हाथ हिलाते हुए कहा--'और जो पहले ही से इतनी समझ आ जाती तो काहे को ये सब भुगतना पड़ता? मगर नहीं, उस वक्त तो ज़ोम सवार था। उँह, आग लग जाय मुए ऐसे ज़ोम में। ऐसा भी क्या मुआ झगड़ा जो आदमी को फ़क़ीर बना के ही छोड़ा।'

क़ादिर की बीवी यह सब सुनते-सुनते तंग आ चुकी थी। रोकर बोली—'ऐ बहन, जरी मेरी भी तो सुन लो। मैं कहती हूँ, मैं अपने इतने बड़े लड़के की कसम खाती हूँ······'

ख़ुरशीद ने आगे बढ़कर कांपती हुई पर तेज़ आवाज़ में कहा—'ऐ है, ज़री देखो तो मालिक को उधर साईं बना के भेजा, अब लड़के को खाए जाती है। वाहरी औरत! इतनी उमिर तो मेरी भी होने को आई, कोई सत्तर और छै बरस तो मुझे भी ज़माना देखते हो गये मगर वाह, तुझे क्या कहूँ? अहा-हा बलिहारी है तेरी।'

फ़ातिमा ने शहज़ादी को टहोका मारते हुये कहा—'ऐ बहन तुम मेरी क्या उमर समझती हो? कोई साठ और पाँच बरस की उमर होगी मेरी भी, मगर नहीं, ऐसी मुई बज़्ज़ात औरत मैंने भी अपनी उमर भर में नहीं देखी। हम तो कहेंगे कि भई हमें कोई सूली पर चढ़ादे, मगर अपने कलेजे के टुकड़े की कसम!—भई हम से तो कभी भी न खाई जाय।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

शहज़ादी भी कुछ कहने ही वाली थी कि क़ादिर की बीवी एकाएक तड़प कर बोल उठी—'ऐ तुम लोग अपनी ही कहे जाओगी कि किसी की सुनोगी भी ? मैं कहती हूँ कि चाहे मुझसे जो कसम ले लो जो मैंने किसी से कुछ भी कहा हो और जो मुझे कुछ भी मालूम हो तो मेरे तन-तन में कीड़े पड़ें ।'

अख़्तरी ने बड़े लहजे के साथ कहा—'ओहरी मेरी बन्नो, ऐसी बड़ी भोली तो हो-ही !'

अख़्तरी और भी अभी न जाने क्या-क्या कहती मगर उस वक़्त तक लोग मियाँ क़ादिर को पकड़े हुए घर ले आए। शहज़ादी ने जीभ को दाँतों के नीचे दबाते हुए दयनीय मुद्रा बना कर कहा--'ऐ है, जरी हमारे कादिर की तरफ़ देखो तो। बिचारे का मुँह कैसा उतर गया !

ख़ुरशीद बोली--'ऐ मैं क़ुरबान जाऊँ । इस मरी-पीटी चुड़ैल ने अल्ला जाने कैसा-क्या कर दिया कि बेचारा एक रात में ही आधा रह गया ।'

बहरहाल, यही हंगामा मचता रहा । इत्तफ़ाक से मियाँ शुबराती को एक काम से चौक की तरफ़ जाते वक़्त अकबरी दरवाज़े के पास पीरू पहलवान दिखाई पड़े । शुबराती ने लपक कर पहलवान के कन्धे पर हाथ रक्खा और बोले—'ये लीजिये, तुम तो यहाँ मजा कर रहे हो, और वहाँ तुम्हारे दोस्त कादिर पर कैसी बीत रही है कि बस अल्ला ही जानता है।'

Sri Pratap Singh Library Srinagar

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

पहलवान ने घबरा कर पूछा—'क्यों-क्यों खैरियत तो है न !'

'सब खैरियत ही है ! वह बेचारा तो घरबार छोड़ फकीरी लेके चला जा रहा है, और आप खैरियत की दुम पकड़ कर चले हैं।'

'अमां हैं ? अमां तुम ये क्या कह रहे हो सुबराती मियाँ ! आखिर यह बात क्या हुई ?'

मियाँ शुबराती ने एक बार चारों तरफ़ सतर्कता के साथ देखा और फिर पीरू के नज़दीक आते हुए बोले—'हुआ क्या ! अमां भाई सच-झूठ की तो अल्ला ही जाने, मगर हमने सुना है कि उसकी जोरू के साथ लड्डन की निगाहें कुछ खराब-सी थीं। कादिर ने यह सब देख लिया, बस इसी से उसने फकीरी ले ली। और इतना तो भाई हम भी कहेंगे पहलवान, कि हजारों बार खुद हमने अपनी आँखों से देखा कि कादिर की बीबी और लड्डन हँस-हँस के बातें कर रहे हैं। मगर हम को क्या ! हमने सोचा कि किसी के मामले में हम टाँग क्यों अड़ायें ? अरे हाँ भई, जो जैसा करेगा वैसा ही पायेगा।

पहलवान ने पूरी बात भी न सुनी और लपक कर क़ादिर के घर की तरफ़ चले। जा कर देखा तो चारों तरफ़ बड़ी भीड़ जमा है, और चबूतरे पर पीला कुर्ता और पीली लुंगी पहने मियाँ क़ादिर घुटनों में मुँह छिपाये बैठे हैं। घर के अन्दर अलग हंगामा मचा हुआ है। भीड़ चीरते-चीरते पहलवान क़ादिर के पास तक आए और उसकी पीठ पर हाथ फेरकर बोले—'अमां क़ादिर !'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

क़ादिर मियाँ उछल पड़े और पहलवान को गले से लगाते हुए रोकर बोले—'सबेरे से हमें सब ने तंग कर रक्खा है। इनके हाथों से हमें नजात दिलाओ, भाईजान।'

पीरू पहलवान ने क़ादिर को सीने से लगाकर भर्राये हुए गले के साथ पूछा—'आखिर तुम्हें ये फकीरी लेने की क्या सूझी थी?'

क़ादिर ने रो कर कहा—'अमां वही तो बताते हैं भाईजान। बात यों हुई......'

बीच ही में टोक कर मियाँ बकरीदी ने आगे बढ़ते हुए कहा—'ये क्या बतायेंगे? मैं तुम्हें सब बताये देता हूँ।'

कादिर मियां फिर चीख़कर बोले—'बस सवेरे से इसी तरह नाकों-चना चबवा रहे हैं। पूरी बात सुनते नहीं और बीच में टाँग अड़ा देते हैं।'

पहलवान ने तेवर बदलते हुए कड़क कर कहा—'अब की जो बोला उसकी ज़ुबान पकड़ कर खींच लूँगा। हमें कोई कादिर न समझ ले कि रो देंगे; मारे चाँटों के मुँह रायता कर दिया जायगा। हाँ जी कादिर तुम कहो।'

क़ादिर ने अपने आँसू पोंछ, सुबुक़ते हुए कहना शुरू किया—'अमाँ कल रात को हमने एक ख्वाब देखा कि जैसे बड़ा चांदना-सा फैल गया है और सामने ख़ुदावन्द करीम खड़े हुए हमसे कह रहे हैं कि तुम लोगों को यह बतलाओ कि हम कल दुनियां के हाल-चाल देखने आएंगे और सबका फैसला करेंगे। सो भाई, वही सब कहने मैं आज सुबू पार वाले साह जी के तकिये पर जा रहा था

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

कि इन लोगों ने मुझे रोक लिया। सुबू पाँच बजे से, अब ये बारह-एक बजे का टेम हो गया, और अब तक इसी तरह रोक रक्खा है। अब शाम की निमाज के बाद अल्लाहताला तसरीफ लाया चहें और यहाँ ये हाल है कि दुनियाँ भर में किसी को खबर ही नहीं। मगर हम क्या करें। वह रहीमानेरहीम सब के दिल का हाल जानता है। अगर इन लोगों ने रोक न रक्खा होता, तो क्या मैं अब तक ये खबर न सुना देता ?'

यह हाल अब जो कोई सुनता है, उसी के छक्के-बक्के छूट रहे हैं। आनन-फ़ानन में यह ख़बर पाटेनाले के कोने-कोने में पहुँच गई, और सब लोग मियाँ क़ादिर की ज़ियारत के लिये आने लगे।

ख़ुदा की मरज़ी, एक घंटे के बाद एकाएक आसमान पर बादल घिर आये, बिजली चमकने लगी, घनघोर काली घटाओं से मूसलाधार बारिश शुरू हो गई। तब तक मियाँ कादिर के इस इलहाम की चर्चा तू-मैं की ज़बान पर होती-होती सारे शहर में फैल गयी थी। और उस वक्त भाई बकरीदी के बतला देने की वजह से पूरा का पूरा पाटानाला कम्बख्त हादीकाने को कोसता हुआ, तस्बीह के दानों को दना-दन फेरता, हाथ और आँखें आसमान की ओर उठा कर रोते हुये कलमा पढ़ रहा था।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain.. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

'कल तो जनाब वो हंगामा मच गया कि उफ़ !उफ़ !! अजी बस पूछिये मत ! वह तो कहिये कि ख़ुदा ने कुछ नज़र-बद से बचा ही लिया —मौक़े पर हम न थे—वरना तलवारों पर मूठें ही बचतीं या धड़ों पर सिर ही सलामतियाँ मनाते नज़र आते।

'सुना साहब, चौक में गुल खिला। एक ने कहा कोठा उलट गया। दूसरे ने उसमें कुछ सुधार किया, कहने लगे; "अजी नहीं भाई जान, उलटा नहीं, बस उलटकर रह गया।" तीसरे तशरीफ़ लाये, दिल पर हाथ रक्खा, ज़रा सी एक सर्द-आह खींची, कुछ आँखों में नमी थी, कुछ गले में गुबार उभर थे, बोले; "हाय! छुन्नन कोठे से गिर पड़ी। बीच बाज़ार में कई सिरों पर गिरी। दिल था सो उछल के निकल पड़ा, आँखें जो फिरीं तो फिर मिलना नसीब न हुआ, धुरपद का ख़याल गले में अटक के ही रह गया। उसके सच्चे आशिक़ों ने

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

जो सुना तो इस वक्त ख़बर यह है कि अपने-अपने घरों में उनकी लाशें फाँसी के फंदों में लटक रही हैं।"

'बी छुन्नन का नाम !—और हमारा नाम उसके आशिकों की लिस्ट में। अजी सुनना था कि दिल पे बन आई। अब लाख-लाख सर्द आहें निकालने की कोशिश कर रहे हैं, आँखों में सावन-भादों बसाना चाहते हैं, मगर जान है कि कम्बख़्त निकलने को नहीं आती। इधर आशिक़ी के नाम पर बट्टा लगता है, और घर में फाँसी लगाने लायक़ जगह नहीं। इरादा यह भी हुआ कि ख़बर लाने वाले साहब को ही हलाल करके रखदें। सरकार ख़ुद ही हमारे लिए फाँसी का इन्तज़ाम कर देगी। वह तो कहिये कि हज़रत क़िस्मत के धनी निकले। हम पैदाइशी बेकार हैं, सब्ज़ी बनती ही नहीं, घर में छुर रक्खी ही किस लिये जाय? और अब तो ख़ुदा के फ़ज़ल से चेहरे पर नूर भी है। पनामा ब्लेड क्या, उसकी एक किर्च भी पास में नहीं। बच गये।

'ग़म का यह हाल कि उमँडता ही चला आया गोया समंदर हो। और हम थे कि उस ज़माने की याद कर करके मजनूं हुए जाते थे जब जवानी का नया दौर ही चला था और छुन्नन का नाम हमारे कानों में बंसी की तरह बजता था। एक दिन महफ़िल में छोटे नवाब की बदौलत दूरसे देख भी लिया था और सीने में एक लोटन-कबूतर पाल लाये थे।......'

'वो उसके जिगर को चीर कर निकली हुई चीख़! हाय! एक-एक लफ़्ज़ अब तक मिस्ले-तावीज़ दिल पर नक़्श है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

"तुम अइयो कान्हा नदिया किनारे मोरा गाँव।"

'अजी गया; मगर जाने से क्या है—चौक के चौराहे पर पन-वाड़ी की दूकान के सामने दुन्नी उस्ताद मिल गये। उनसे कहा कि भई तुम दो दिलों को जोड़ने के लिए सरेस बन जाओ। बोले, "मियाँ सोना मँहगा है। पचास का भाव है दस पाँच और लगे-लिपटे में।"

"मन मसोस के रह गया। वेकारी तीन पुश्त से विरासत में चली आ रही है। हम तो ख़म ठोक के सरे-बाज़ार पुकारते चलते हैं कि हमें कोई ऐरा-ग़ैरा न समझना, ख़ान्दानी वेकार हैं जनाब। कभी हमारे पुरखे भी गोटे-पट्ठे का काम करते थे। एक ही कारीगर थे। एक-एक गुल-वदन निखर उठती थी। मगर जनाब, अब तो न गुल हैं न गुलाब हैं, फ़क़त लेडियाँ हैं। गोटे-पट्ठे ठंडे पड़ गये। लिप-स्टिक की आमद में पान की लाली मुरझाई, केले की सिल्क चली और दस्तकारी साफ़। अब तो हाल यह है कि दादियों के मुँह से उस ज़माने की गढ़न्ते सुनते हैं; कभी-कभी चूल्हे की ख़ूराक के लिए पुराने वेल फूलों के बचे-खुचे ढप्पे निकालते हैं तो वाजिदअलीशाह के ज़माने के 'घुन' सन् सत्तावन के ग़दर की याद कर बिलबिलाते हुए चूल्हे के जोशो-जज़्बात से दूर भागते हैं।

'बताइये फिर भला छुन्नन हमारे पास क्योंकर आती?'

'एक बार सुना कि सँवलिया नवाब की बारहदरी में छुन्नन छूमछनन करेगी। धक्के खाये, गले में हाथ पड़े; वो प्यारी-प्यारी आवाज़ नसीब कहाँ, दरबान की गालियाँ अलबत्ता सुनीं। मगर वाह रे हम, किसी का एक भी भर्रा न चला। वहीं दीवार में दुबक कर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

बैठ रहे। वो चिल्ले की रात फ़क़त मजलिसी-रईसों के क़ीमती गर्म कपड़ों का ध्यान करके काट दी। बीच बीच में छुन्नन के सुरीले गले की दाद जब दी जाती तो हम जी उठते। तबीयत इस तरह बाग़-बाग़ हो उठती, कि हम गोया अपनी ख़ास बीवी की ही तारीफ़ सुन रहे हों।

'तारों ने झपकी ली और महफ़िल उठी। रईस रुख़सत हुए और हमारी आँखें बी छुन्नन के इन्तज़ार में बिछ गईं। चिड़ियों ने चहकना शुरू किया। नवाब छुन्नन को डोले तक ख़ुद पहुँचाने तशरीफ़ लाये। हमने झुक कर सलाम किया। नवाब समझे हमने उनकी इज़्ज़त बढ़ाई। उन्होंने जवाब दिया। बी छुन्नन ने तभी एक बार हमसे भीं नज़रें मिलाईं थीं।

'वो दिन है और आज का रोज़—कलेजे में जो तीर धँसा तो अब निकलता ही नहीं। अब ये ख़बर जो सुनी तो क्या नाम है कि उस्ताद के कलाम का निचोड़, कि मौत तो किसी न किसी दिन आही मिलेगी मगर रात की नींद तो हमारे लिए छुन्नन हो गई!

'ग़म किसी तरह भी ग़लत ही न हो। इरादा किया जाकर आख़िरी बार की झाँकी लें, मगर सुना कि लाश कोठे पर उठ गई। बात सुनने के लिए जो सिर उठाया था सो उठाये ही रहे। फिर एक बात दिमाग में आई तो ख़ुद उठे। गिड़गिड़ाते हुए जाकर बेगम से कहा एक चवन्नी दे दो। बेगम ख़ुदा जाने क्यों, उस दिन मुझ पर मिहरबान थीं या क्या—बहरहाल बात-बात में चहकी पड़ती थीं! गमक कर उठीं। पहले पान की दो बीड़ियाँ लगाकर खिलाईं; फिर कमर से बटुआ निकाल चार चेहरेशाही पकड़ा दिये।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

"अजी ज़िंदगी में न कभी देखी न सुनी। ऐसी सख़ावत कि राजा करन भी मात। अब साहब ग़म को तो किया ज़ेरे-पाकिट और चमक के पूछता हूँ, बेगम, मुझे ?

'मुस्करा के बोलीं "हाँ !"

'अब हम हैं कि कलेजा थामे खड़े हैं और लक़-लक़ बेगम के चेहरे पर आँखें चिपकी हैं।

'और कैसे अर्ज़ करूँ कि अपने मुँह से कहते शर्म आती है। आप कहेंगे कि अपने माल की आप तारीफ़ की। मगर असलियत यह है कि अगर तवायफ़ होती तो हिन्दुस्तान के नौजवान कट मरते और शाहज़ादी होती तो अब तक दुनिया के शाहंशाह क़ब्रों में आराम फ़रमाते होते। मगर क़िस्मत तो हमारी खुलने को थी कि अगर आज इससे शादी न होती या इसका ऐसा इख़लाक़ न होता तो हज़रत, आज हमको क़ब्रिस्तान की ज़मीन नापे बरसों गुज़र गई होतीं। कुछ उसी की क़िस्मत है कि इज़्ज़त की दो रोटियाँ मिलती हैं। कभी गुनगुना देती है तो राग रागनियाँ हाथ बाँध कर खड़ी हो जाती हैं। जब हँसती है तो यक़ीन मानें बिजली झेंपकर रह जाती है। ख़ान्दान इतना ऊँचा कि बड़े-बड़े नवाब उसके रिश्तेदार—कोई चचाज़ाद तो कोई बुआज़ाद भाई। रोज़ ही कहीं न कहीं जाना आना। हम ग़रीब हैं इसलिए बहुत से नवाब छिप कर हमारे यहाँ आते हैं। कुछ न कुछ अपनी बहन को दे ले जाते हैं। यह जनाब उसका इख़लाक़ है कि बड़े-बड़ों को घसीट लाता है। यह समझें कि नवाब छुट्टन, और नवाब बच्छन, और नवाब अच्छन और छोटे नवाब और कल्लन

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

नवाब और बड़े-बड़े ख़ांबहादुर और डिप्टी कलक्टर गर्ज़ें कि कच्चे धागे में चले आते हैं सरकार बँधे। सलीक़े और फ़ैशन की तो यह हालत है कि जब कभी दिल ख़ुश करने के लिए ऊँची एड़ी का जूता पहन कर घर में छाता तान खड़ी हो जाती है तो बड़ी-बड़ी लेडियाँ उसके आगे पानी भरें। वैसे देखने में कुछ नहीं एक फ़क़त ज़री-सी गुलाब की गोली सी है। कोई देखे तो कहे ज़्यादा साढ़े बारह बरस की होगी। मगर ये कि हमारा दिल तो छुन्नन के छपके में बिंधा है, बेगम की तरफ़ कुछ ख़याल ही कम जाता है।

'तो जनाब, जो उसने चार रुपये मुझे टिकाये तो मैं हक्काबक्का हो पूँछ बैठा। बेगम, आज इतनी इनायत क्यो ?'

'बोलीं ?—"वो कलमुँही छुन्नन सुना ग़श खाकर कोठे से गिरी और काला मुँह कर गई। अब गुल्लन भाईजान के सिर की बला टली। मैं ख़ुश हूँ।"

'मैं समझा। नवाब गुल्लन साहब भी बेगम के मामूज़ाद भाई हैं। छुन्नन पर जी जान से फ़िदा। उनकी तमाम दौलत मेरी जान के कोठे में खिसकी जाती थी। इसे कुछ न कुछ मिलता था। इसीसे बेगम छुन्नन से कटती थीं। मेरे दिल पर चोट तो लगी, मगर चुप रहा।......'

× × ×

पूरे दो घण्टे बाद मियाँ की मेल ट्रेन रुकी। यह कोई एक हफ़्ते पहले की बात है। कम्पनी बाग़ में कोने की बेंच पर बैठा एक मज़मून लिख रहा था। अचानक यह महीन से मियाँ तशरीफ़ लाये। पहले

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

कुछ तकल्लुफ़ किया। बेमौक़े आ टपकने की मुआफ़ी मांगी। मगर मजबूरी ज़ाहिर की—दिमाग़ परीशान होने की वजह से वह भी सन्नाटे की जगह बैठ कर ठंडे होना चाहते थे। बेंच के एक कोने में बैठने की इजाज़त मांगी। फिर क़िस्से शुरू किये और फिर धीरे से उस आशिक़ बयानी पर उतर आये।

थोड़े ही में कह दूँ, हज़रत मुझसे फिर इस क़दर ख़ुश हुए कि उसी वक्त अपने घर चलने के लिए मजबूर किया। कहने लगे; 'अगर आप तशरीफ़ न ले चले तो मैं समझूँगा कि ग़रीबों का दुनिया में कोई नहीं।'

लिहाज़ा साहब मैं ग़रीबों का सब कुछ बन उनके दौलतख़ाने पर गया। गली, मकान सब कुछ वाजिब ही वाजिब था। मगर हम थे कि कुछ तकल्लुफ़ में बैठे बातें कर रहे थे। एकाएक हज़रत दो मिनट की इजाज़त लेकर कहीं बाहर गये।

इसी बीच में जनाब, दरवाजे के पीछे फ़िरोजाबाद की कारीगरी झुनझुना उठी। पहले एक आवाज़ ने होश फ़ना किये फिर एक गोरे से हाथ ने निकल कर मेरे दिल की हरकत बन्द की। हाथ में एक ख़त था। जो मुझे पढ़कर सुनाने के लिए दिया गया। ख़त जो पढ़ने लगा तो दिमाग़ की बातें झनझना उठीं।

……धीरे-धीरे……क्या अर्ज़ करूँ। बस यही समझ लें कि अब मैं भी मियाँ की बेगम के रिश्तेदारों में हूँ। हफ़्ते भर में तीन बार तो अपनी इस ख़ालाज़ाद बहन से मिल आया हूँ। रिश्तेदारी दिन ब दिन रंग पकड़ रही है जनाब !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

'ककहरा ! मस्ता !! कामा !!! काड—हम पूछिति हयि हमरे केसन महियां यू ससुर अज़ई क पलवा जौनु भरा आय, यू कौने दिन हमरे काम आई ?······दुनिया भरे क्यार वाहिहातु······ससुर······पराई बहू-बेटिन से दीदा मटकावा औ—बस !···रेंकि उठे गदहा असः 'आह ! प्रिये नूपुर की रुनझुन'—ईमा ससुर टाइप फँसाओ ! हिं : !!'

'अरे का भा हो ? यू प्रिये का बिगारिसि आय तुम्हार ?—सुकुल जी ।'

सुकुल जी 'स्टिक' रख कान से ऐनक की डोरी खोलते हुए बोले—'अरे का सुकुल जी ससुर ! कबिता लिखति आंय जेहि क्यार गोड़-मूड़ कतौं ससुर सूझै नाहिं परति आय ! प्रिये-प्रिये गोहरावति हैं—औ तेहिमा ससुर बाडर लगाओ, औ फूल बनाओ औ बेला लगाओ । च्वाँगा सारे नहिं के ।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

'अरे होई हो !..... तमाखू खैहिहौ हो—सुकुल जी ?'

'लाओ ।......परौं ते तमुखुऐ ससुर नाहीं खावा । राम परसाद परौं भिनसारे खिलखिलाय के बुढ़ुआ लावा रहै ।.....उहि के बाद उहौ ससुर गुम हुइ गवा ।—बटुआ ।'

सुकुल जी ने एक गहरी साँस ली ।

तभी आये सम्पादक जी ।

'सुकुल जी । कहिये क्या हो रहा है ?'

'अरे होई का ?—उहै प्रिये वाली कविता कम्पोज कै रहे हन । बैजू बनाइन तमाखू, हम कहा लाओ हमहूँ फाँकि लेई । परौं राम परसाद बटुआ लाइके दिहिस रहै !.....तुमहू खैहिहो हो ?...सम्पादक जी ? बैजू, इन हू का खिलाओ ।'

'और सुनाओ सुकुल जी ! छनती-बनती है कि नहीं ?'

'हाँ ! छनति आय !'

'खूब टन्न ! हैं ?'

'हाँ टन्नै आय ! टन्न न छानी तौ का ससुर आजु काम कै सकिति रहै ?'

'क्यों, क्या हुआ ?'

'हुआ क्या !—कुछौ नहीं—यहै कहिति रहन यू ससुर प्रिये-प्रिये नूपुर की रुनझुन—हमरे बाप-दादौ अस कविता कम्पोज न किहिन हुइहैं ।.....प्रिये-प्रिये क्या ? हरामजादे सारे नहिं के ।'

दोनों हाथ कमर पर रख सीना आगे की ओर झुकाते हुए मुँह बना कर सुकुल जी ने फँकी लगाई और धोती से हाथ पोंछ लिए ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

सम्पादक जी मुस्कराये। सुकुल जी के कन्धे को बड़ी गर्मजोशी के साथ हाथ से झिंझोरते हुए बोले: 'अरे कुछ जवानों का खयाल भी कीजिये सुकुल जी। आपकी तो दाढ़ी सफ़ेद हो चुकी !'

पिच्च से थूक कर सुकुल जी कुछ तैश के साथ बोले; 'अरे क्या सफेद हुइ गई ससुर ? आजु-कालिह के जवान-जवान लरिका दिखाय देई—मूड़े भरि महिंयाँ याकौ करिया न मिली। और ऊपर तें चसमा लगावति आयँ ससुर।'

'क्यों गुरू ! ये सारी गर्मागर्म फ़ब्तियाँ हमारे ही ऊपर, हैं ?'

'नाहीं, तुम्हारे ऊपर का—तुम तौ ससुर सम्पादक जी आओ। मुदा बात कहिति हयि हम। कौने जवान ते हम कम हयि ? ई बिरजेसौ सार हमारे आगे जवान बनी ? जौन ई प्रिये-प्रिये लिखिसि आय ! बेईमान ! हरामजादा ससुर !!

सम्पादक जी हँसे। कहा 'अरे, अरे, आज ये बृजेश जी पर इतनी नाराज़ी क्यों सुकुल जी ? वह तो आपके पड़ोसी हैं।

सुकुल जी मुंह बना-बिगाड़ कर धीरे-धीरे बोले, 'नाहीं, नराजी का। ऐसनै बात कहा।'

'उदाहरन दिया। हैं हो सुकुल जी ?'

सुकुल जी अपने चश्मे की डोरी अनमने भाव से हाथ में लपेट-लपेट कर खोल रहे थे। बैजू की बात पर एकाएक चीख़ उठे।

'उदाहरन नहीं सीताहरन।......चले हुआं से उदाहरन बनिकै ! जाओ-जाओ, काम करौ आपन। कायदा अदब ससुर सब मूड़ै पै धरि लिहिन ! उदाहरन लै के चले हैं।........सूझत नाहीं, सम्पादक जी ठाड़ हैं।........हाँ साहेब, आप का पुरूफ लाये है ? खुद

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

काहे तकलीफ फरमावा ? खैर ! तौ अब ई पुरूफ फैनल आय न ? दीच्छित जी तो मीन मेख न निकालैंगे ?'

'नहीं-नहीं फ़ाइनल ही है। इसे करैक्शन के बाद मशीन पर भेज दीजिये।'

ओठों ही ओठों से मुस्करा कर सम्पादक जी ने उत्तर दिया।

'तौ प्रिंट-आडर तौ लिखौ साहेब ! हमार जिम्मेदारी आती हैं कि नहीं ?'

'अरे-अरे ! भूल गया ! लाइये लिख दूँ।'

सम्पादक जी 'फ़ॉर्म' के आख़िरी पेज पर प्रिंट-आर्डर लिखने लगे। सुकुल दूसरे पेजों के करैक्शन उलट रहे थे। एकाएक एक जगह देखते-देखते कह उठे।

'साहेब, ई-ई बिलाक ससुर अब मैटर में नहीं लग सकता।

हई फजूल क्यार करक्सनु आय।'

सम्पादक जी ने पेज की तरफ़ देख कर धीरे से समझाते हुये कहा: 'मगर लेखिका का ब्लॉक जाना ज़रूरी है सुकुल जी, लगा दीजिये ज़रा तकलीफ़ तो होगी।'

दो सेकेण्ड चुप रह कर फिर एक निश्वास छोड़ कमर तानते हुये सुकुल जी बोले: 'अच्छा साहब हुइ जायगा।'

सम्पादक जी चले गये। सुकुल जी ने एक बार लेख का शीर्षक ज़ोर-ज़ोर से अपने लहजे में पढ़ा: 'ह-मा-हमारे भी-दिल है—हमारे भी दिल है—लेखिका, सिं-री-म-ती ललितादेबी।........गुसाईं जी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

नीकी बात कहि गये—"सूद्र, गँवार, ढोल, पसु, नारी।"······ सारिन का जूता चही—जूता—नालदार।—हमारे भी दिल है!— एक ते पचास गनै फिर भूलै फिर लगावै।—हमारे भी दिल है! हिं:······हे बैजू, हटाओ ईका। करौ करक्सन! हमते, यू न होई! ······'न लाज न सरम! छिः!'

सुकुल जी ने फ़फ़ बैजू, की ओर फेंक दिया। बैजू चुपचाप अपना काम करता रहा।

सुकुल जी ने उससे पूछा: 'का कम्पोज कै रहे हौ हो?'

बैजू ने ज़ोर-जोर से पढ़ा: 'बूढ़े भी जवान होगये'—कोक-शास्त्र बटी क्यार विज्ञापन—करै जाइति हैं। सुकुल जी थोड़ी देर खोपड़ी खुजाने के बाद बोले: तुम रहै देओ, और मैटर हमैं देओ! तुम ईमा करेक्सन करौ। बिलाक फिट करौ। लाओ।'

सुकुल विज्ञापन कम्पोज़ करने लगे।

थोड़ी देर बाद बैजू से पूछा, 'का हो, ई विज्ञापन इहै फरमा महियाँ जाय रहा है न!'

'हाँ! काहे?'

'काहे का! हम कहा दुई ठे पत्ती घोटि लेइति, मुदा जाय देओ। काम कै लेई। तनी तमाखू तौ बनाय देयो हो!······राम परसाद बटुआ हमार खोय दिहिस!··अच्छा! "बूढ़े भी जवान हो गये।"··· अयँ? कै तौ रहे हन कम्पोज?

'मुदा तुम ते यू पूछिस को?' बैजू ने हँस कर कहा।

सुकुल जी भी हँस पड़े। बोले:

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

'हम जाना, तुम ससुर पूछ्यो हमते। हिं: !······ई बिज्ञापन का का बिरजेस क्यार कविता के साथै फिट करिति हयि खूब बाडर-बाडर सजाय के।'

''मुदा सम्पादक जी तौ—''

बैजू की बात काट कर सुकुल जी बोले: 'अरे सम्पादक ससुर का? बीस बरसैं भई कम्पोजीटरी करते हमें। क्या समझे! हम जानी कहाँ नीक लागी कि उई? उई गरीब-पंचु पइसा खरचिसि आय, कबिता के साथ विज्ञापन जाई तो हजार मनई पढ़ि हैं।'

बैजू सुकुल जी की झख को जानता था। चुप हो रहा।

× × ×

'अरे सुकुल जी! ये क्या भई?' दो घंटे बाद प्रूफ़ देखते हुए सम्पादक जी ने सुकुल जी को बुला कर पूछा।

सुकुल जी मेज़ पर हाथ रख कर बड़ी गम्भीरता के साथ धीरे-धीरे बोले। साहेब तुमई जानि लेओ अकि बीस बरसैं भई कम्पाजीटरी करते हमैं! हजारन के इनही हाथन ते कवि और महाकवि बनावा। याकु दाइं आपन नाम कम्पोज कै दिहा तौ कौनो बुराई आय!

सम्पादक जी ने हँस कर कहा: 'मगर इस विज्ञापन के साथ में! भई क्या सूझी आपको भी!'

इतने में प्रधान सम्पादक दीक्षित जी भी आगये। सम्पादक जी ने हंस कर प्रूफ़ उनकी ओर बढ़ाते हुये कहा: 'सुकुल जी अपनी पब्लिसिटी कर रहें है, ''पं० बद्रीदीन सुकुल कम्पोज़ीटर भी कोकशास्त्र

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

बटी दवा खा कर बूढ़े से जवान हो गये।'' ठाठ से 'ग्रेट' में कम्पोज़ किया है आपने।'

दीक्षित जी कहकहा लगा कर हंस पड़े, कहा: 'अरे' छः लाइन' 'में करते। क्या मज़ा आयेगा ग्रेट' में, सुकुल जी ?'

सुकुल जी कुछ अप्रतिभ से हो फ़ौरन कमरे से बाहर होगये। कुछ सोचा, फिर लौटे। दरवाज़े तक आये। इशारे से सम्पादक जी को बाहर बुलाया। और अकेले में ले जाकर फिर बोले: 'साहेब, हमार जिन्दगी आपै के हाथ में है।'

'क्यों—भई ? क्या बात है ?'

'साहेब ! बस जिन्दगी बचाओ हमार।'

कहते कहते उनकी आँखों में आँसू छलछला आये।

सम्पादक जी ने दिलासा दिया। बोले—'बात क्या है सुकुल जी ?'

सुकुल जी आँसू पोंछते हुये बोले: 'ई विज्ञापन वाली बात ऐसने इहै कविता के साथ जाय दीजिये साहेब !'

'क्यों ?'

'क्यों क्या साहेब ! का कही साहेब। हमार जिंदगी बचाइये।'

'अरे हुआ क्या ? आख़िर कुछ कहोगे भी या ऐसे ही—'

'का कही साहेब।······तुम ई जान लेओ अकि पांच वरसैं हमरे ई दूसरे व्याहे के भईं। चारि बरस का हमार राम परसाद भवा। और का कही साहेब, परौं ई ससुर बिरजेस के साथै भाग गई साहेब। राम-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

परसादौ हमारा लै गई। उइके बिना जिन्दगी फीकी आय। ई पढ़ैंगी तो सायिति है लौटि आये! रामपरसादौ हमार आय जायगा।…जिनका कोई खोय जाता है, उइ विज्ञापन छपावति हैं, याकु दाइं ई छापे के हरफन ते हमहूँ फैदा उठाय लेई। तुमई जानि लेओ अकि बीस बरसें भई कम्पोजीटरी ससुर—'

सुकुल जी बार बार आँसू पोंछते और बार बार उनकी आँखें भर आती थीं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

सिगरेट खुले-आम पीने की अपनी बुरी कही जानेवाली आदत पर एक गुरुजन का महत्वपूर्ण आदेश सुन रहा था। गुजराती-ब्राह्मण-समाज के वयोवृद्ध भद्र-पुरुष चूँकि बहुत-सी बातों की प्रगति को नहीं रोक सकते, लिहाज़ा उनका आदेश है कि परदे में छिपाकर उन्हें किया जाय। मिसाल के तौर पर बाज़ार की चाट अब इस बीसवीं सदी में खाई तो जा सकती है, परन्तु उस समय चोटी में गाँठ बाँध लेना और यज्ञोपवीत को अँगूठे में फंसाकर दोना पकड़ना बहुत ज़रूरी है। यह सब क़वायद भी तीन कमरों के बाद, चौथी कोठरी में किवाड़ बन्द कर, करनी चाहिए। सिगरेट पीने के लिए भी घर में एक स्थान मुक़र्रर कर दिया गया है—पाख़ाना। मैंने, चूंकि, दोनों नियमों को तोड़ दिया है, और साथ-ही-साथ चोटी और जनेऊ को भी तलाक़ दे चुका हूँ, इसलिए उद्दण्ड, उच्छृङ्खल आदि गौरवपूर्ण उपाधियों से

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

विभूषित हूँ। लेकिन मेरे सिद्ध-प्रसिद्ध 'कविराज'—पोयेट-लॉरियट—होने के कारण हर एक को मेरे ही सामने मेरी इन बुरी आदतों पर टीका-टिप्पणियां करने का साहस ज़रा कम होता है।

लेकिन उन्हें तो मैं, एक बार 'भरी-सभा' में ख़ास अपनी ही ज़बान से चाचाजी कह चुका था, इसलिये उन्होंने अपना यह परम धर्म समझा कि इस धर्म-च्युत भतीजे को सामाजिक उपनियमों का ज्ञान करा दें। वह अपना आल्हा गा रहे थे, तभी अचानक दरवाज़े के पास मजीरे के साथ-साथ हरि-कीर्तन की ध्वनि सुनाई पड़ी। मेरी इच्छा उस समय यह थी कि अपने पूज्यपाद चचा को तीन-चार 'शुद्ध शास्त्रोक्त' प्रमाण दे खुले-आम सिगरेट पीने पर क़ायल कर दूं। कीर्तन ने अनायास ही मेरी महत्ता पर आघात पहुँचाया।

वह एक बंगाली वैष्णव था—कीर्तनिया। मेरे पहनावे और आकृति से लोगों को अक्सर मेरे बंगाली होने का भ्रम हो जाया करता है। उसने भी यही समझा। मुझे देखते ही उसके 'अकार' 'ओकार' में बदल गये।—'होरे-रामा, होरे-रामा, कृष्णो-कृष्णो, होरे-होरे' सामने आने के प्रायः दो मिनट बाद ही उसकी गर्दन हिलना बन्द हो गई। मजीरेवाले हाथ क्रमशः शिथिल होते-होते एकदम रुक गये। थोड़ी देर पहले के साश्रु-निमीलित नयन और गद्‌गद-कण्ठ सहसा पुलकित हो खुल गये। अपनी बत्तीसी बाहर निकाल, गिड़गिड़ाते हुये हाथ पसार कर उसने कहा—'एक्टू पॉयशा देवेन्, गोशाईं!'

जेब से एक पैसा निकाल कर मैंने उसे दे दिया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

परदेश में मुझे ख़ालिस स्वदेशी जानकर उसने अपनी मातृ-भाषा में ही बातचीत करना शुरू कर दिया। पैसा पाने के बाद अपनी कनपटी खुजलाकर गिड़गिड़ाते हुए उसने कहा—'अज्ञे-अज्ञे, हें:, हें:, बाबू, इस जगह तो सब गुजराती लोग ही बसते हैं, आपके दर्शन तो मुझे आज ही हुए।'

मैंने उसके देश की बोली में ही उत्तर दिया—'भाई, मैं भी तो गुजराती ही हूँ, तुम्हारे देश का नहीं।'

वह अचकचाकर मेरी ओर देखने लगा। एक क्षण बाद अविश्वास की हंसी-सी हंसते हुए उसने कहा--'वह सब कुछ भी हो लेकिन बँगला तो आप बड़ी परिष्कृत बोलते हैं।'

मैं चुप रहा। थोड़ी देर बाद वह फिर आवेग में आ कहने लगा–'आहा, आज अनेक दिन बाद अपने देश की बोली सुनकर मेरे कान तृप्त हो गये—मानों किसी ने मेरे कानों में मधु घोल दिया हो। मैं आपसे सत्य ही कह रहा हूँ बाबू, हिन्दी बोलने में मुझे बहुत कष्ट होता है। भोगोवान् आपका भला करें, गोशाईं; आपके दर्शन कर आज तो चित्त प्रसन्न हो गया। आहा!'

अन्तिम वाक्य उसने गद्‌गद कण्ठ से कहा। उसके बाद ही एकदम गर्दन पलट गई, आँखें बन्द, पुचके-पिचके गालों पर दो गोल-गोल मोती के-से दाने ढुलक आये।

मैं चुपचाप उसकी भाव-भंगी पर ग़ौर कर रहा था।

भावावेश के दौरे से सहसा जागकर उसने फिर कहना शुरू किया—'कालिकाता में आपका बाड़ी कौन सी स्ट्रीट पर है? मैं भी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

कलकत्ते में ही रहता हूँ—हावड़ा जेला में।......क्या बताऊँ बाबू, भाग्यवश आज अनेक वर्षों से यहीं 'वृन्दाबोन' में, श्रीराधागोपाल के चरणों में अपना जीवन बिता रहा हूँ।···और···आर आपनी की बाह्मोन, गोशाईं ?'

मैंने छोटा-सा उत्तर दे दिया--'हाँ'।

बङ्गाली-बोंष्टम (वैष्णव) ब्राह्मण-देवता के सामने पट-से लेट गया। साष्टाङ्ग दण्डवत प्रणाम के बाद उसने कहा—'आहा, वही तो, इतनी देर से मैं खड़ा यही सोच रहा था कि यह स्वरूप, यह तेज, बाह्मन के बेटे के सिवा और किसमें हो सकता है ! मैं भी तो कायस्थ हूँ--पानीत्राश का मित्र-वंशीय। भाग्यवश आज अनेक वर्षों से यहीं वृन्दाबन में श्रीराधागोपाल—'

उसके इस लम्बे-चौड़े तकिया-कलाम का कता-कलाम कर मैंने कहा--'तुम पानीत्राश के शरत बाबू को जानते हो—शरत चाटुज्जी ?'

ज़रा देर कनपटी खुजलाकर उसने कहा—'शेई नभेल-नाटोक लेखा पोड़ा शोरत बाबू ना ? उन्हें तो मैं खूब जानता हूँ। वे मेरे ऊपर बड़ी दया रखते हैं। आहा, क्या बताऊँ बाबू, भाग्यवश आज अनेक वर्षों से यहीं बृन्दावन में अपना जीवन बिता रहा हूँ, नहीं तो मेरी भी गृहस्थी थी। मेरे एक लड़का था—मेट्रिक पास—एकदम फार्स्ट। क्या बताऊँ बाबू, मेरे किसी पाप के कारण भगवान् ने मुझसे उसे छीन लिया।···ऐसा होनहार लड़का था क्या कहूँ !···आहा, मुझे यह दारुण दुख भोगने के लिए अकेला छोड़ कर गोलोकवासी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

हो गया ! गिन्नी (गृहिणी) पहले ही मर चुकी थी।···उसके बाद ही समस्त मायाजाल तोड़ कर श्रीराधाकृष्ण के—'

वैष्णव अधिक कुछ न कह सका। उसका कण्ठ अवरुद्ध हो गया। सजल नेत्र ऊपर की ओर उठा उसने दोनों हाथ जोड़कर अपने श्रीराधाकृष्ण को प्रणाम किया।

मैंने बात पलटते हुए प्रश्न किया—'तुम्हें चण्डीदास के पद याद हैं ?'

आँसू पोंछकर उसने उत्तर दिया—'चण्डीदास ? उनके पद तो मुझे याद नहीं। मैं तो खाली हरिनामकीर्तन करना ही जानता हूं।'

कहकर उसने एक बार फिर अपने मजीरे सम्भाले।

सम्भव है, आप मुझे नास्तिक समझें, परन्तु इस घोर कलिकाल में भी मैं इतना सत्य बोलने से हरगिज़ न चूकूंगा कि मुझे 'नाम-कीर्तन' नाम की चीज़ से सख़्त नफ़रत है। कीर्तनियों का आँखें बन्द कर ताली, झाँझ या मजीरे बजा-बजाकर नाचना, सम्भव है बहुत से भावुक हृदयों को मुग्ध कर ले, परन्तु मुझे तो वह केवल शुद्ध पाखण्ड के सिवा और कुछ भी नज़र नहीं आता। यह भी सुना है कि इस घोर 'कलजुग' में नाम-कीर्तन ही भगवान् के पास पहुंचने का सर्वोत्तम और सुलभ साधन है। कीर्तन करनेवाले को, सुना है, ढाई मिनट के बाद स्वर्ग का फाटक सूझने लगता है और उसके बाद एकदम फाटक खुलते ही श्रीश्रीकृष्णजी महाराज श्रीश्रीराधारानी के गले में बाहें डालकर बंशी बजाते हुए अपने भक्त को दर्शन देते हैं। इसी लालसा से मैंने बहुत दिन हुए, एक बार नाम-कीर्तन किया था, पर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

कुछ मज़ा न आया। तभी से तो मैं हवन करने का क़ायल हूँ।

बहरहाल, क़िस्सा-कोतः यह कि जैसे ही उसने 'होरे-होरे', पुकारा मैंने चट से कहा---'यह कीर्तन रहने दो। मैं तो सिर्फ़ चण्डीदास के पद सुनना चाहता, था।'

उसने खिसिया कर मजीरे बजाना बन्द कर दिया, कहा—'मैंने चण्डीदास के पद नहीं सीखे। भाग्यवश आज अनेक वर्षों से यहीं वृन्दावन में श्री राधागोपाल के चरणों में पड़ा हूँ, इसी से चण्डीदास के पद सीखने का अवसर नहीं मिला। मैं तो यही राधाकृष्ण नाम जानता हूँ। इस नाम में बड़ी शक्ति है बाबू—इसी कृष्ण नाम का कीर्तन करने से आजकल मुक्ति होती है। महाप्रभु यह कह गये हैं।'

मैंने मुस्कराकर कहा—'और महाप्रभु यह भी तो कह गये हैं कि नाम-कीर्तन 'एकान्ते, नदी तीरे, अथवा शून्य-मन्दिर' में ही करना चाहिए।'

उसने मजीरे रगड़ते हुए, बत्तीसी बाहर निकालते हुए कहा—'हें! हें!'

मेरे गुजराती चचा अभी तक बैठे थे हुए मेरी और उस बङ्गाली वैष्णव की बातचीत सुन रहे थे। हमारी बातचीत उनके लिए वेद की उन ऋचाओं से कम कठिन न थी, जिसे हिन्दुस्तानी बाँभनों के बजाय जर्मनी के पंडित ज़्यादा समझते हैं। वह बीच-बीच में चकित-चितवन से कभी बङ्गाली वैष्णव की ओर निहार लेते थे और कभी इस अपने गुजराती भतीजे की ओर देख लेते थे। मैंने भी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

उनकी तरफ़ देख कर सिगरेट उठाई। उन्होंने नाक-भौं सिकोड़ना शुरू किया। मैंने ज़रा-सा मुस्करा कर, वैष्णव की ओर मुँह फेर कर उससे कहा—'तो तुम्हें अचानक यहाँ आगरे आने की क्या ज़रूरत पड़ी ?'

'ऐसे ही भगवान् का नाम लेता हुआ यहाँ चला आया। लेकिन देखता हूँ, यहाँ के साले हिन्दुस्तानी लोग ईश्वर के नाम पर दान करना भी नहीं जानते। अब वृन्दावन चला जाऊँगा। वृन्दावन बहुत अच्छी जगह है बाबू।—भगवान का धाम ! आहा !'

कहकर उसने वृन्दाबन के प्रति झुक कर प्रणाम किया। फिर थोड़ी देर तक 'विमोहित से, बिकाने से' की मुद्रा में खड़े रहने के बाद हठात् उसने कहा—'चाँलून ना, एके बारे शेई पाँरम पाँबित्राँ धामे ? बड़ा रमणीक स्थान है। वहाँ जाने से मनुष्य की मुक्ति हो जाती है। ......आहा, मेरा मन तो इस समय वहीं रम रहा है। क्या बताऊँ बाबू, मेरे रेल-भाड़े का यदि कोई भक्त प्रबन्ध कर दे—तो मैं इसी समय यह नरक-समान जगह छोड़ कर चला जाऊँ। यहाँ तो माँगे भीख भी नहीं मिलती।'

अपनी बात ख़त्म कर वह मेरी ओर देखने लगा। मैं उसके मन की बात उसी समय समझ गया था, जब उसने मुझे वृन्दावन चलने का निमन्त्रण दिया। सोचने लगा, जिस बात का ख़याल था, आख़िर वही हुई भी—पहले तो बङ्गाली, फिर वैष्णव और मुख्य बात यह कि कायस्थ था; इसीलिए इन तमाम लच्छेदार बातों के बाद कितने सुंदर ढङ्ग से वह मुझसे रेल का किराया माँग रहा था—मैं मन-ही-मन इस पर ही ग़ौर कर रहा था।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

मुझसे किसी प्रकार का उत्तर न पाकर उसने फिर गिड़गिड़ाते हुए अपनी बात शुरू कर दी—'आपको 'हजार गौदान करने का पुण्य प्राप्त होगा, बाबू। राधारानी आप के बच्चों को सुखी रक्खें। मैं बड़े कष्ट में हूँ।···क्या बताऊँ, श्रीवृन्दावन-धाम छोड़कर मैंने बड़ी गलती की। उसका फल भी पागया। यह देखिए, आज तीन रोज से भर पेट खाना भी नहीं मिला।'

कहकर उसने अपना पेट खोलकर मुझे दिखा दिया। आँखों से आँसू फिर बहने लगे।

मैं सोच रहा था, अगर ज़रा भी बोला, तो यह मित्रवंश का भक्त-शिरोमणि फ़ौरन् ही मेरी 'पर्स' का शत्रु हो जायगा। इसलिए एकदम चुप्पी साध गया।

लगभग दो मिनट तक चुप खड़ा रहने के बाद उसने फिर मजीरे ठनकाना शुरू कर दिये।

मैंने झुँझला कर उसकी तरफ़ देखा, कहा—'अच्छा, इस वक्त़ अब तुम जाओ। मैं ज़रा इन बाबू के साथ ज़रूरी बात कर रहा था।'

कहकर मैंने अपने पूज्यपाद धर्मप्राण चचाजी की तरफ़ इशारा किया।

वैष्णव बोला—"हां बाबू, मैंने आपका बहुत समय नष्ट किया... लेकिन ऐसा मालूम पड़ता है कि श्रीराधागोपाल ने जैसे मेरा कष्ट हरने के लिए ही आपको यहाँ भेज दिया है। भगवान् अपने भक्तों के द्वारा ही साधु-सन्तों का कष्ट हरण करते हैं। मैं बड़े कष्ट में हूँ

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

बाबू, भगवान् साक्षी हैं। आपको मुझ पर दया करनी ही होगी। आप शरत बाबू के आत्मीय हैं। वे बेचारे मेरे ऊपर बड़ी दया रखते हैं। मुझे उन्होंने कई बार सहायता दी है। इसलिए आप भी मेरे ऊपर कृपा करें। भगवान् आपका भला करें।'

वैष्णव ने शरत बाबू के नाम का लाभ उठाना चाहा। मैंने सोचा, मैं ही इस समय इसे उनके स्वर्गवास का समाचार सुनाकर, वाग्धारा को दूसरी ओर प्रवाहित कर दूं।

शरत बाबू की मृत्यु का समाचार सुन उसने एक बार फिर आँसू ढुलकाने शुरू कर दिये—'आहा, मर गये बेचारे! बड़े सज्जन थे—एकदम देवता समान। एक बार मेरा लड़का जब बीमार पड़ा था तो उन्होंने मुझसे कहा, "दीनबन्धु! तुम किसी बात की चिन्ता न करो। तुम्हारे लड़के की दवा-दारू का सब खर्चा मैं तुम्हें दूँगा।" वे उसे बहुत चाहते थे।...शरत बाबू बेचारे बड़े भले आदमी थे। और उनके सम्बन्धी होकर इस समय आप मुझे बृदावन का रेल-भाड़ा तो देंगे ही। शरत बाबू तो बेचारे सबके लिए बड़े दयालु थे; और खासकर मेरे ऊपर तो उनकी बड़ी कृपा थी। अब जैसे इसी समय था, वे यदि जीवित होते और उन्हें मालूम हो जाता कि पानीत्राश का दीनबन्धु मित्र इस समय बड़े कष्ट में है तो चट से मेरी खबर लेते। और आप भी, मुझे विश्वास है, मेरे ऊपर अवश्य ही दया करेंगे।...क्यों न बाबू?'

मैं अपने चचा से बात करने की कोशिश करने लगा। कुछ देर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

तक चुपचाप खड़े रहने के बाद उसने फिर अपने मजीरे खटखटाना शुरू कर दिये।

इस बार मैं बुरी तरह से झुँझला उठा। मैंने ज्यों ही उसके तरफ़ घूर कर देखा और चाहा कि एक फटकार बताऊँ, वह मेरे पैर पर लोट गया। कहने लगा—'मुझे तो स्वयं श्री कृष्ण महाराज ने ही आप के पास भेजा है, इसलिये आपकी शरण छोड़ कर मैं और कहीं भी न जाऊँगा। आप ही मेरे कष्ट हरेंगे।'

सच कहता हूँ, कृष्ण महाराज के ऊपर मुझे उस समय निहायत ग़ुस्सा आ रहा था। न-मालूम उन्होंने मुझसे कब की पुरानी अदावत निकाली। बैठक के बाहर, सड़क पर कई आदमी खड़े-खड़े यह तमाशा देख रहे थे। जेब में कुल जमा दो ही रुपये थे। अपने लखनऊ शहर में होता तो उसे एक फटकार बताकर बाहर निकाली देता, मगर यहाँ—ससुराल में—तो यह उचित ही न था; इसलिए चुपचाप निकालकर दे दिये। और यह सबक़ लिया कि आइन्दा से किसी भी वैष्णव से कभी बँगला में बातें न करूँगा।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

मुंशी बख़्तावरलाल उसी ज़ात के एक रतन हैं जिनके यहां उर्दू और फ़ारसी लौंडियों की तरह हर वक्त हाथ बाँधे खड़ी रहती हैं। ऐसा मशहूर है, और वह ख़ुद भी दिन में हज़ार बार कहते हैं कि मलिके ज़मानियाँ नवाब वाजिद-अलीशाह साहब, ख़ुदा उन्हें जन्नत बख़्शे, बिना इनसे पूछे पानी तक नहीं पीते थे। बक़ौल आपके, वह आपको अपने उस्ताद की तरह मानते थे; यानी कि बस हद होगई कि जहाँपनाह ने जो 'इन्दर-सभा' डिरामा लिखा था, उसकी इस्लाह आप ही से करवाई थी ।

मुंशी जी हमारे पड़ोसी हैं। उनका कहना है कि उन्होंने इस ख़ाकसार को बचपन में गोदियों खिलाकर इसकी इज़्ज़त अफ़ज़ाई की हैं। बहरहाल, हमें तो साहब कुछ याद-वाद नहीं, लेकिन जब आप

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

फ़रमाते हैं तो सही होगा। बस, शक सिर्फ़ इस बात का है (मुंशी जी साहब की रूह इस आधी रात के वक्त 'इन्दर-सभा' की जिस किसी परी के साथ जश्न मना रही हो, मुझे मुआफ़ी अता फ़रमाये) कि अम्मीजान और वालिद बुज़ुर्गवार तो हमेशा यही बतलाया करते थे कि मैंने शहर कलकत्ता में पहली बार सूरज की रोशनी देखी थी। और इतना तो मुझे भी अच्छी तरह याद है कि जब मैं बारह बरस का था, तब वालिद साहब मरहूम हम लोगों के साथ कलकत्ता छोड़ अपने वतन लखनऊ वापस आये थे।

इधर जनाब मुंशी जी साहब का कहना है कि जब अंगरेज़ लोग बादशाह-सलामत को धोखे से गिरफ्तार कर कलकत्ता ले जाने लगे, उस वक्त बन्दापरवर ने जनाब मुंशी जी साहब को भी अपने साथ ले जाने की इजाज़त माँगी। आप ही का कलाम, "मेरी आँखों में आँसू आगये। अब आपसे क्या अर्ज़ करूँ अपनी उस वक्त की हालत, कि धड़ाधड़ ग़श पर ग़श चले आ रहे हैं, और बादशाह सलामत, ख़ुदा उन्हें जन्नत बख़्शे, परमेशुर करे वह जहाँ कहीं भी हों, दूधों नहायें, पूतों फलें, ख़ुद मेरी यह हालत देखकर ज़ार-ज़ार रो रहे थे। अब अँगरेज़ लोग भी हैरत में कि आख़िर यह कौन शख़्स है, जिसकी बीमारी से ख़ुद बादशाह-सलामत तक को इतना सख़्त सदमा पहुँच रहा है। ख़ैर साहब, रामराम कर के पूरे चार घंटे में मुझे ज़री-सा होश आया। जो आँखें खोल के देखता हूँ तो बड़े-बड़े लाट और कलक्टर और डिप्टी कमिश्नर मेरे आस-पास खड़े हुए हैं। मुझे होश में आया देखकर एक अँगरेज़ ने कहा कि

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

जहाँपनाह ने ख़ुद हुज़ूर के सिराहने खड़े होकर वज़ीफ़ा पढ़ा था, और इस वक्त आरामगाह में तशरीफ़ रक्खे हुए ज़ार-ज़ार रो रहे हैं।

'आप यक़ीन मानें साहब, कि ऐसा ग़रीब परवर, दरिया-दिल, और कोई हुआ ही नहीं। ख़ुदा उन्हें जन्नत बख़्शे, वल्ला, एक ही दम पाया था हुज़ूर नवाब साहब ने भी कि बस क्या बयान करूँ कि अहा—हा—हा !'

'ख़ैर जनाब, जो मुझे यह पता चलता है तो बस कहाँ की बीमारी और कहाँ का ग़म—भागा हुआ हज़रत की आरामगाह की तरफ़ गया; जाकर तसल्ली दी कि हूज़ूर, आप यह क्या कर रहे हैं ! एक नाचीज़ के लिए हूज़ूर अपने दिल को रंज न पहुँचायें। बादशाह सलामत एक दम उछल कर मुझे गले से लगाते हुए बोले कि भाई बख्तावर, मैं तुम्हें छोड़ कर नहीं रह सकता। मैंने उन्हें दिलासा देते हुए अर्ज़ किया कि हूज़ूर, अब इस ग़ुलाम को आज़ादी बख़्शिए। कहाँ तो जहाँपनाह के ज़ेर-साये परवरिश पाता रहा और अब इन फ़रंगियों की सल्तनतमें जाकर बसूँ? मेरी जान बख़्शी जाय, इस ख़ाकसार ने आज तक कभी हुक्म-उदूली करने की गुस्ताख़ी नहीं की। मुझे जहांपनाह इजाज़त दें कि मैं यहीं रहकर आलीजाह की तरफ़ से इन फ़रंगियों से बदला लूँ।...तो हज़रत, आप यक़ीन मानें कि यह ख़ाकसार पेशावर से लेकर मदरास तक घूम आया; और यहाँ तक कि जब मदरास जा रहा था, तो कलकत्ता स्टेशन रास्ते में पड़ा, लेकिन मैं उतरा नहीं !'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

गर्ज़ कि इन तमाम बातों के कहने का मक़सद महज़ इतना ही है कि मुंशी जी कभी कलकत्ता तशरीफ़ नहीं ले गये, और बारह बरस की ऐसी उम्र नहीं जिसमें कि किसी को आसानी से गोद में उठा कर खिलाया जा सके। बहरहाल, बहुत-सी ऐसी बातें हैं जिनको कि बग़ैर सिर उठाये ही तस्लीम करना होता है।

जनाब मुंशी जी साहब ने, सन् ३० के सत्याग्रह आन्दोलन के ज़माने में एक बार ज़िक्र छिड़ने पर यह भी फ़रमाया था कि आप ही की जूतियों के तुफ़ैल से लखनऊ में ग़दर मचा था। और वह तो कहिये कि महज़ एक ज़री-सी ग़लती से सब किये-कराये पर पानी फिर गया, वरना इस वक्त अवध में क्या, पूरे हिन्दुस्तान में नवाबी-अमल होता। और साहब, सच तो यह है कि नवाबी के भी क्या कहने! आप यकीन मानें, हज़रत, कि उस वक्त लोग यह भी नहीं जानते थे कि रंजोग़म कहते किस चिड़िया को-हैं? बस जनाब, आँखों के सामने ही अंगूरी शराब खिंचवा रहे हैं, जाम पर जाम उड़ रहे हैं और अब यह हाल है कि कोई पुर्साहाल नहीं।

ग़दर के नाकामयाब होने का सबब आप यह बतलाते हैं कि ज्यों ही आप घोड़े पर सवार होकर मैदाने-जंग की तरफ़ बढ़े तो शहर की तमाम मशहूर और निहायत हसीन तवायफ़ें आपके पीछे पड़ गईं। रो कर कहा कि आपके साथ हम भी चलेंगी क्योंकि आपके बाद लखनऊ में क़द्र करनेवाला और कौन रह जायगा। और माशाअल्लाह, उस वक्त आप वह कड़ियल जवान-पट्ठे थे कि आप ही के लफ़्ज़ों में, 'जिधर से मैं निकल जाता था, हुस्न के बाज़ार में

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

आहें भरी जाने लगती थीं।' खैर साहब, अब यह समझा रहे हैं और वह मानती नहीं हैं, कहती हैं हम लोग साथ ही जायँगी। किसी तरह दम-दिलासा देकर जो आपने ऐंड़ लगाई तो बस जाकर हरौनी ही में दम लिया जहाँ कि ग़दर मचा हुआ था। अपने सिपह-सालार को देखकर सिपाहियों का दिल दूना हो गया। अँगरेज़ी फ़ौजें भागने ही वाली थीं कि एकाएक तक़दीर का तख़्ता ही पलट गया। भई, कुछ भी हो, मगर हम तो कहेंगे, वाह रे इश्क़! मुन्शी जी साहब के वियोग में सबकी-सब तवायफ़ें जोगन बनी हुई आख़िरकार मैदानेजंग में भी पहुँच ही गई और रो-रोकर मुन्शी जी को लगीं घोड़े पर से घसीटने। अब मुन्शी जी दनादन फ़ैरों पर फ़ैरें कर रहे हैं, और उनकी एक एक गोली से सौ-सौ अँगरेज़ वफ़ात पा रहे हैं। एकाएक एक अँगरेज सार्जेन्ट की गोली दन-दनाती हुई इनकी तरफ़ आई और यह तय था कि वह इनकी खोपड़ी के ठीक बीचो-बीच एक आर-पार का सूराख़ कर देती कि ऐन मौक़े पर मुन्शी जी के इश्क़ में अधमरी हो जानेवाली इन हसीनों के बदन में ख़ुदा जाने कहाँ से इतनी ताक़त फट पड़ी कि जो सबने मिलकर इनका हाथ पकड़ कर घसीटा तो बस धम से घोड़े के नीचे ही दिखाई पड़े। मुन्शी जी फ़रमाते हैं कि उस अँगरेज़ सार्जेन्ट ने ख़ास इन्हीं को ख़तम करने के लिए ऐसी ज़बरदस्त गोली छोड़ी थी कि आगे जाकर उसने एक पीपल के पेड़ को भून कर रख दिया। मगर इनके गिरने का असर इनकी फ़ौज पर बहुत बुरा पड़ा। उन लोगों के हौसले पस्त हो गये; और उन्होंने यह समझा कि जनाब मुन्शी जी साहब उस अँगरेज़

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

सार्जेन्ट की गोली खाकर इस जहान-फ़ानी से कूच कर गये। फिर क्या था, इनकी फ़ौज में इस तरह भगदड़ पड़ी कि बस क्या अर्ज़ किया जाय। सिपाही लोग उस अँगरेज़ सार्जेन्ट को कोसते और जनाब मुन्शी जी साहब मरहूम की याद में रोते हुए वापस लौटने लगे। अब यह हर एक सिपाही को पकड़-पकड़ कर समझा रहे हैं कि भाई मैं मरा नहीं ज़िन्दा हूँ मगर उन्हें यक़ीन ही नहीं आता।

(२)

रोजाना अख़बार में खबरें छप रही हैं कि महात्मा गान्धी और जवाहरलाल नेहरू वग़ैरह-वग़ैरह गिरफ्तार हो रहे हैं। जगह-ब-जगह हड़तालें हो रही हैं, धरने दिये जा रहे हैं। लाठियाँ और बन्दूकें चल रही हैं। जनाब मुन्शी जी साहब एक दिन मुहल्ले में रहनेवाले काँग्रेसी वालंटियरों से बोले—'यह क्या तुम लोग ग़लत रास्ते पर जा रहे हो ? वल्ला, अगर कहीं मैं महात्मा गांधी की जगह पर होता तो चुटकी बजाते-बजाते यों सौराज दिलाता, यों ! नवाब वाजिदअलीशाह साहब के ज़माने में भी लखनऊवालों ने यह चाहा कि उन्हें आम सड़कों पर शराब पीने का सौराज मिल जाय। ख़ैर साहब, वह लोग आये हमारे पास। हमने कहा कि यह कौन बड़ी बात है, अभी चलो। बस पहुँच गये नवाब साहब के दरबार में। बादशाह सलामत ने जो इतने हुजूम के साथ आते देखा तो खड़े हो गये, और मुसकरा कर मेरा इस्तक़बाल करते हुए फ़रमाया, कहो भाई बख़्तावर, यह सब क्या माजरा है ? मैंने अर्ज़ किया हुजूर, यह लोग सौराज चाहते हैं। बादशाह सलामत के माथे पर शिकन पड़ गये, तेवर बदल कर फ़र-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

माते हैं, किस बात का सौराज जी ? इस ख़ाकसार ने अर्ज़ किया कि हुज़ूर सौराज चाहते हैं और क्या। बादशाह सलामत ने फ़रमाया कि सौराज ले कर आख़िर यह लोग क्या करेंगे ? मैंने अर्ज़ किया. हुज़ूर को दोआयें देते हुए यह लोग शराब पी पी कर सड़कों पर जश्न मनायेंगे। मेरी इस बात पर हज़रत कुछ इस तरह ख़ुश हुए कि बस मुसकरा कर सौराज दे दिया। और साहब मैं क्या, मेरे वालिद बुज़ुर्गवार और बाबाजान मरहूम ने भी वक़्त-फ़-वक़्त लोगों को इसी तरह सौराज दिलाया है। तो साहब यह हमारा ही काम है कि एक घड़ी के अन्दर जिसको चाहें सौराज दिला दें। अब गांधी जी क्या खाकर सौराज लेंगे ? कहीं झण्डा लेकर नमक बनाने से सौराज भी मिलता है ? हमको कहिए, देखिए यों सौराज दिला दूं।'

मुहल्लेवालों ने भी कहा—'साहब इससे अच्छी क्या बात है ?' बस, जनाब मुन्शी जी साहब झट से अन्दर जाकर अपनी घराऊ चपकन और टोपी पहन कर बाहर निकले।

मुहल्लेवालों ने नारा लगाया—'इन्क़लाब-ज़िन्दाबाद', 'भारत माता की जै', 'मुन्शी बख़्तावरलाल की जै'। मुन्शी बख़्तावरलाल ने निहायत ख़ुश होकर अपने शाने हिला दिये।

एक ने पूछा, 'मीटिंग कहाँ कीजिएगा ?'

आप अकड़ गये, फ़रमाया—'मीटिंग के क्या माने जी ? हम तो लाट साहब से मिलने जा रहे हैं।' और आपने निहायत जोश के साथ उनकी तरफ़ देखकर कहा—'इन्क़लाब-ज़िन्दाबाद !'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

पूछनेवाले साहब ख़ुफ़िया पुलिस के एक अफ़सर थे। इधर इन्होंने नारा लगाया, उधर उन्होंने इनका हाथ पकड़ा कि आइए, मेहमानख़ाने में तशरीफ़ ले चलिए।

मुंशी जी साहब अकड़ गये, कहा—'तुम कौन हो जी ?' फिर पीछे की तरफ़ मुड़कर वालंटियर से कहा—'इन्हें बता दो कि हम कौन हैं ?'

पुलिस के इन अफ़सर साहब ने मुसकरा कर इनका हाथ झँझोरते हुए फ़रमाया—'अजी इधर आइए साहब। हमें मालूम है कि आप कौन हैं। वह देखिए, हुज़ूर लाट साहब ने आपकी ख़ातिर के लिए एक मोटर भी भेज दी है।'

लारी पर बैठते वक्त भी जनाब मुन्शी जी को इस बात का गुमान न था कि वह हवालात लिये जा रहे हैं। दूसरे वालंटियरों ने भी आपको यही यक़ीन दिलाया कि लाट साहब ने आपकी बड़ी इज़्ज़त की है।

मोटर लॉरी जब कोतवाली में पहुँची और सिपाही इन्हें हवालात की तरफ़ ले जाने लगे तब तो आप बहुत घबराये, लगे रो-रो कर दारोग़ा जी के पैर पकड़ने। रो के फ़रमाते हैं—'ऐ हुज़ूर मैं तो सरकार का पुराना ख़ैरख़्वाह हूँ।'

दारोग़ा साहब मुसकरा कर बोले—'अजी वाह, ऐसी बात करते हैं आप ? आप तो नवाब वाजिदअलीशाह साहब के ख़ास दाहिने हाथ थे, आपके ज़रा तेवर बदल देने से ही ग़दर मच गया था और साहब आपने तो कई बार सौराज दिलाया है... ..।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

मुन्शी जी ज़ार ज़ार रोने लगे, कहा—'हुजूर बुढ़ापा बिगड़ जायगा। यह सारी इज्ज़त ख़ाक में मिल जायगी।'

'अजी इज्ज़त की इसमें क्या बात है? आप तो जनाब वाजिद-अली शाह साहब......।'

'वल्ला, इल्म क़सम हुज़ूर, किसी दुश्मन ने मेरे ख़िलाफ़ हुज़ूर के मेहरबान दिल में कुछ बदगुमानी पैदा करने की कोशिश की है। अब आप ही ख़याल फ़रमाइए बन्दा-परवर, कि कहाँ मैं और कहाँ नवाब वाजिदअलीशाह साहब का ज़माना? खुदा उन्हें जन्नत...नहीं नहीं, हुज़ूर भला आप ही ख़्याल फ़रमाइए कि मैं क्या मेरे बाप-दादे भी उस वक्त पैदा भी नहीं हुए होंगे, हुज़ूर।'

'अच्छा, तो गोया आप अभी तक कमसिन ही हैं? ख़ैर, सिपाहियों ले जाओ इन्हें। यह लाट साहब से मिलने जा रहे थे न?'

मुन्शी बख़्तावरलाल ने ज़ार ज़ार रोते हुए कहा—'ऐ हुज़ूर अब की बार माफ़ कर दीजिए। भला मेरी इतनी जुर्रत कि मैं मलिके ज़मानियाँ हुजूर लाट साहब, खुदा उन्हें ज...नहीं नहीं हुज़ूर, परमेशुर करे वह दूधों नहायँ पूतों फलें—अब उनसे मिलने की मेरी ताब कहाँ है हुज़ूर? आप सलामत रहें, मुझे अपने बच्चों के सदक़े ही से छोड़ दीजिए। इस वक्त तो आप ही हमारे लिए लाट साहब हैं, सरकार।'

× × ×

मुआफ़ी माँग कर छूट आने के बाद हो जनाब मुन्शी जी साहब अपने घर लौट आये। मैंने उनसे दरियाफ़्त किया—'कहिए साहब कुछ कामयाबी हासिल हुई?'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

मुन्शी जी ने अकड़ कर फ़रमाया—'वल्ला आप भी कैसी बातें करते हैं हज़रत !' और फिर मूँछों पर ताव देते हुए बोले—'भला जिस काम में मुन्शी बख़्तावरलाल हाथ डालें और वह पूरा न हो ! लाट साहब ने फ़ौरन ही हुक्म दिया कि काग़ज़ात तैयार करो। बस अब काग़ज़ तैयार होने भर की देर है, कि सौराज हो गया। अब आप यह ख़्याल फ़रमायें कि नवाब वाजिदअलीशाह साहब, ख़ुदा उन्हें........' फिर एकाएक घबरा कर बोले—'नहीं-नहीं वह सब कुछ नहीं, आप उन्हें कुछ ख़्याल न कीजिएगा हज़रत ! अच्छा इस वक़्त मुझे ज़री एक काम है।'

बात पूरी होते-होते मुन्शी बख़्तावरलाल ने अपने मकान के किवाड़े खट से बन्द कर भीतर से कुंडी लगा ली।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

भौजी के कचालू

असाढ़ की एक गर्म रात में पानी से तर ख़स के पंखे पर बेले का हार डाल उसे डुलाते हुए, चारपाई पर लेटे-ही-लेटे मियाँ क़ादिर ने आवाज़ दी, "अमां भौजी !"

भौजी अपनी कोठरी के सामने फ़ुटपाथ पर चारपाई डालकर लेटी हुई ग़फ़ूरन से बातें कर रहीं थीं। क़ादिर ने फिर कहा, "अरे, सुनती हो ? तुम्हीं से कह रहा हूँ ?"

इस बार भौजी ने क़ादिर की ओर मुँह फेर कर कहा, "अरे क्या है ? घण्टा भर से भौजी-भौजी चिल्ला रहे हो, कुछ कहो भी ?"

ओठों में ही धीरे-धीरे मुस्करा कर मियाँ क़ादिर ने कहा, "ऐ, आज तो तुम बड़ी खबसूरत जँच रही हो ! नवाब भाई कहाँ गए ?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

मौजी ने पङ्खा झलते हुए बड़े इतमीनान के साथ कहा, "वह तो आज शाम को कानपुर गए हैं।"

"तब फिर यह सितम किसके लिए ढाया है ?"

"तुम्हारे लिए।" मौजी ने मुस्कुरा कर तिरछी चितवन से उसकी ओर ताक कर कहा।

"अरे, हम तो तुम्हारे ऊपर ऐसे ही फ़िदा हैं—सौ जान से क़ुर्बान !"

मौजी ने ज़रा लज्जा का भाव दिखलाते हुए कहा, "चलो भई, कलेजे को ठंडक पड़ी। मैं तो समझती थी कि इस बुढ़ापे में अब..."

बात काट कर मियाँ क़ादिर ने लहजे के साथ कहा, "जब बुढ़ापे में यह हाल है, तब जवानी में ख़ुदा जाने क्या कैफ़ियत रही होगी ! अच्छा मौजी, तुमने कभी इश्क भी किया है ?"

"न भाई तुम ऐसा कोई आसिक ही न मिला था तब !"

मियाँ क़ादिर आसमान की तरफ़ देखते हुए चुपचाप पङ्खा झलने लगे।

एक मिनट के बाद मौजी ने कहा, "सो गए क्या ?"

क़ादिर मियाँ एक दम चौंक कर बोले, "कौन मैं—और सो गया ? अरे, लाहौल पढ़ो, मौजी ! इतने दिन तो तुम्हें भी यहाँ रहते हो गए। भला, कह तो दो जो किसी दिन भी दो बजे से पहले सोया हूँ तो......?"

महज़ मज़ाक के लिए ज़रा चुटकी लेते हुए मौजी ने कहा, "बस, रहने भी दो। कच्ची नींद में पड़े ही हुए थे ! अभी मैं जो जरी दो

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

मिनट और अवाज न दूँ, मियाँ कादरहुसैन खर्र-खर्र करते होते।"

"यह लीजिए। अब यह मजा देखो! अमाँ, हम तुमसे कहते हैं कि सो नहीं रहे थे। चाहे क़सम ले लो। जरी एक बात सोच रहे थे हम तो, और आप कहती हैं कि सो गए—अरे वाह, भौजी!"

"ऐ, तो ऐसा क्या सोच रहे थे?"

"यही, जरी इश्क के मामले की बात थी।"

भौजी ने मियाँ क़ादिर की तरफ़ करवट ले ली। कहा, "क्या किसी से इश्क पैदा किया है?"

मियाँ क़ादिर ने मुस्करा कर, "कह तो दिया कि तुमसे।"

भौजी झेंप गईं, पर चूकीं नहीं। जवाब दिया, "अरे, हमसे तो तुम्हारी पुरानी आसनाई है। हमने तो समझा था कि तुम्हारे नवाब साहब की महरी अब्बासी......"

मियाँ क़ादिर ने धीरे-से कहा, "अमाँ चुप भी रहो। तुम तो बस मजाक करके छूट जाओगी, और यहाँ सवेरे खाने तक के लाले पड़ जाएँगे। हम तो कह रहे थे कि आजकल हमारे नवाब साहब जरी आसिक मिजाज हो गए हैं।"

हाथ ऊँचा उठा कर उसके सहारे सिर टिकाते हुए भौजी आगे की ओर ज़रा झुक आईं। कहा, "अच्छा, उस मुए नवाब के बच्चे को किस घाट का पानी पिला दिया?"

"हाँ-हाँ, चाहे जो कह लो—मरी-पीटा, मुआ, मूंडीकाटा, हरामजादा—जो जी में आए कहो। आज तो वह कानपुर चले ही गए हैं।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

भौजी बुरी तरह झेंप गई और फिर झेंप मिटाने के लिए ही हँस कर क़ादिर मियाँ को मारने का इशारा करते हुए कहा, "दुत, तुम बड़े खराब आदमी हो, कादिर ! मैं तो तुम्हारे उस मुए आका को कह रही थी !"

"हमारे, नवाब साहब बिचारे ने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है। सीधा सादा आदमी बिचारा, और फिर आजकल मजनू हो रहा है !"

"अरे वही तो पूछती हूँ, कहाँ आँखें लड़ीं। किसकी किस्मत में हजार पाँच सौ की गठरी बदी है !" भौजी ने बड़े कौतूहल के साथ पूछा।

निहायत संजीदगी के साथ मियाँ क़ादिर ने कहा, "एक दिन वह ठाकुरगञ्ज जा रहा था।"

"हाँ-हाँ, आज कोई दस-पन्दरा दिन हुए।"

"बस, तभी तुम्हारी तीरे-नजर ने उसे..."

"ऐ चलो, बस रहने दो। एक जरी-सी बात बताने में तुम्हें..."

"अरे नहीं भौजी, सच कहता हूँ, वह तुम्हें रटा करता है।"

भौजी को कोई बात नहीं सूझी, लिहाज़ा एक सर्द आह खींच कर कहा, "हाँ भाई, हम भी अगर बी अब्बासी की तरह हसीन होते तो काहे कोई हमको यों बनाता।"

"ये लीजिये, कहती हैं हम बना रहे हैं। भला मैं तुम्हें क्या बना सकता हूँ !...अमाँ गफ़ूरन, अरे सो गई क्या !"

गफ़ूरन ने करवट बदल कर कहा, "भला, जब तक तुम्हें नींद न आ जाय क्यों कर कोई सो सकता है !"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

"अच्छा, अब यों ताने कसोगी ? भला हमने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है, बी गफ़ूरन जान ?"

"बिगाड़ोगे और क्या ? नींद हराम कर रक्खी है तुमने तो ! अब कल से तुम्हें कम्पनी बाग में बाँध दिया करुँगी, पड़े-पड़े दो बजे तक रेंका करना।" बी गफ़ूरन ने मुस्करा कर कहा।

मियाँ क़ादिर ने कहा, "अरे भाई, कम्पनी बाग में क्यों बांधोगी। हमको तो तुमने और भौजी ने मिलकर पहले ही से अपनी काकुले-पेचाँ-में-गिरफ्तार कर रक्खा है।"

भौजी और गफ़ूरन दोनों साथ ही-साथ कुछ कहना चाहती थीं कि एकाएक मियाँ हुसेनी अपना ताँगा हाँकते हुए आ पहुँचे।

"अबे, क्या बक-बक लगा रक्खी है ?" मियाँ हुसेनी ने आते ही क़ादिर से कहा !

"अमाँ, तुमने कुछ सुना भाईजान ? ये भौजी और तुम्हारी बीबी हम पर मर रही हैं।"

घोड़े की रास खींचते हुए मियाँ हुसैनी ने हँस कर कहा, "अच्छा बेटा, अभी आकर तेरी इस्कबाजी का मजा चखाता हूँ !" कह कर वह अहाते के अन्दर अपना ताँगा खोलने चला गया। मियाँ क़ादिर ने टीप लगाई :

आया चौथा महीना क्वाँर,
कहती वह नार,
मुझे इन्कार--
पलँग पर चढ़ना !......

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

तांगा खोल कर हुसैनी गुनगुनाता हुआ आया और क़ादिर की चारपाई पर बैठ कर उसकी छाती थपथपाता हुआ बोला, "तुम्हें कुछ मालूम भी है मियाँ, कल भौजी हमसे कह रही थीं कि हमें तांगे पर घुमाने ले चलो। न भाई, तो फिर हमने कहा कि जो नवाब भाई हमारे ऊपर खफ़ा हुए तब ?"

भौजी ने बीच में टोक कर हुसैनी से कहा, "अच्छा-अच्छा, जो जी में आए कह लो। कल तुम दोनों को क़ाँजी हौस में बन्द करा दूँगी।"

मियाँ क़ादिर ने चुटकी लेते हुए कहा, "अरे भई, तुम्हारा ज़माना है भौजी, जी चाहे तो फाँसी पर लटकवा देना। अमाँ हुसैनी, तुम्हें कुछ मालूम भी है, हमारे नवाब आजकल इन पर फ़िदा हैं।"

हँसते हुए, ज़रा कुछ उत्तेजित होकर, मियाँ क़ादिर की छाती थपथपाते हुए हुसैनी ने कहा, "अरे यार, तुम्हें आज का क़िस्सा तो बताया ही नहीं। तुम्हारे नवाब साहब आज हमारे ही तांगे पर बैठ कर उसी ठेठर के मनीजर के यहाँ गए थे। फिर उसी के साथ आप केसरबाग गये, वहीं जहाँ सब ठेठरवाली इक्ट्रेसें रहती हैं न ?"

मियाँ क़ादिर एकदम चमक कर उठ बैठे, और हुसैनी की पीठ पर ज़ोर से हाथ मार कर कहा, "अच्छा, अबकी तो बुद्धू मियाँ बड़ी भारी मंजिल मार आये! मनीजर से क्या-क्या बातें हुईं ?"

"रस्ते में कहने लगे, वल्ला मनीजर साहब, क्या कमाल का खेल आपकी कम्पनी दिखलाती है कि बस, क्या कहने हैं! और उस दिन तो बस कमाल ही कर दिया था उस इक्ट्रेस ने, जो लैला बनी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

थी। भई वाह, क्या हुस्न पाया है··· !' सुना भाई, इस तरह जो नवाब साहब तारीफ़ें करने लगे तो बस मनीजर ने अपना मतलब साधा। अमां, हम तुमसे सच कहते हैं कादिर, हमारी आँखों के सामने ही नवाब साहब के बच्चे ने सौ रुपये के नोट मनीजर को दिये। वल्ला, अपनी जान कसम...!"

बात काट कर क़ादिर ने पूछा, "अच्छा फिर ?"

"फिर क्या ? मनीजर ने कहा कि घबराइये नहीं, अभी हुस्न-आरा को आपकी बगल में बिठाये देता हूँ। आज ठेठर की छुट्टी है। जी चाहे तो रात-भर मोटर में घुमाइये। कम्पनी की गाड़ी भी हाजिर है। हाँ, जरा पिटरौल का खर्चा है। अमाँ क्या बतायें, ये साला मनीजर अपना ही फायदा सोचता है। नहीं तो, अल्ला-कसम, आज रात-भर में आठ दस रुपये कमा लेता।"

"और हुस्नआरा को बगल में दबाए-दबाए घूमते, क्यों ?" मियाँ क़ादिर ने कहा।

"अमाँ, हटो भी। बे-फ़जूल की बकवास लगा रक्खी है। ख्वांमख्वां रात की नींद हराम कराने में क्या मजा मिलेगा उस्ताद !"

"अच्छा तो आप ये समझते हैं कि बी गफ़ूरन को आपकी कुछ परवाह है ? अमाँ उनके हिसाब से चहे तुम हुस्नआरा के साथ रात काटो या चावलवाली गली में। वह तो हम पर मरती हैं। क्यों बी ग़फ़ूरन जान ?"

मियाँ के लिये रक़ाबी में रोटियाँ निकालकर रखते हुए ग़फ़ूरन ने उलटे हाथ के सहारे पर अपनी ठोड़ी टेकते हुए कहा, "ऐ-है,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

जरी देखो तो सही, कादिर मियां के चेहरे पर खूबसूरती टपक रही है। ऐ-हाँ, हम क्या, सारी दुनियाँ मरती है तुम पर। ऐ हाँ भाई, आदमी क्या हो, परीजादे हो परीजादे !"

बड़े इतमीनान के साथ मुस्कुराते हुए मियाँ क़ादिर ने अपनी दाढ़ी पर हाथ फेरना शुरू किया, और फिर हुसैनी से बोले, "सुन लिया न भाई जान ? अब तो यकीन आया ? अमाँ, अमाँ तुमने देखा क्या है ! कल देखना, इधर तो तुम तांगा लेकर गये, और उधर इन्होंने हमसे निकाह पढ़ाया।"

रोटी खाते-खाते मियाँ हुसैनी ने कहा, "चलो, यह भी ठीक है। भौजी हमसे कह भी रही थीं। हम इन्हें अपने घर विठा लेंगे।"

मियाँ क़ादिर ने कहा, "अमाँ, ये कैसे हो सकता है ? भौजी से और हमसे तो पहले ही इकरारनामा हो चुका है।"

मियाँ हुसैनी ने आवाज़ लगाई, "भौजी होत् !" और भौजी की नाक ने उत्तर दिया, "खर्र-खर्र।"

(२)

क़ादिर मियाँ की उम्र उस वक्त शायद बारह या तेरह बरस की रही होगी जब उनके नवाब भाई का दहिना हाथ शहीद होगया था। क़िस्सा यों है कि नवाब मियाँ के पुर-नूर चेहरे पर मुस्तीगंजवाली खटकिन परवाने की तरह मर मिटी। खटिक मियाँ टापते ही रह गये और चमको बीबी छम-छम करती हुई, उसके देखते, इनके साथ घण्टाघर वाला तालाब देखने चल दी। दूसरे दिन जब नवाब मियाँ नवाबगंजी पटाख़े लिए चौक से लौट रहे थे, शबे-रात का ज़माना

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

था, खटिक मियाँ ने स्प्रिट से गीले रूमाल में झप से दियासलाई दिखा इनके हाथ पर उछाल दिया। बस जनाब, आप यह मुलाहज़ा फ़रमाएँ कि तोप-सा धड़ाका हुआ और पंजा-का-पंजा सर्र से ग़ायब! बाक़ी रही सिर्फ़ ख़ून और चर्बी का फ़ौवारा छोड़ती हुई उनकी कलाई और उसमें से लटकता हुआ अधजली नसों का लोथड़ा।

"तब से भौजी-ही अपनी मुँह-जली सौत और नवाब मियाँ की दारू की बोतल और चाट का इन्तज़ाम तरकारी बेंच-बेंच कर करती हैं। हम तो कहते हैं बड़ी गमखोर हैं हमारी भौजी, नहीं तो इन्हें क्या कमी थी? बड़े-बड़े नवाब लोग इन पर कुर्बान होते रहे। हजारों बार हम ही से लोगों ने कहा, 'कादर हुसैन, सौ रुपये तुम भी ले लेना। नवाबिन को हमारे हरम में पहुंचा दो।' मगर नवाबिन बन्दी ऐसी कि सदमें उठा लेना मंजूर, तकलीफें सह लेना गवारा, मगर अपनी जगह छोड़ के न गई। लाखों रुपये के जेवर इनके सामने रख दिये थे हमारे नवाब ने, मगर बन्दी ने मुँह फेर कर देखा भी नहीं।...और ये साला कमीना ऐसी परीजादी-सी सआदत-मन्द औरत को मार रहा है।" बिजली के खम्भे का सहारा लेकर खड़े हुए कादिर मियाँ एक राह चलते को नवाबिन के चीखने-चिल्लाने का सबब बता रहे थे।

"अम्मा, तो बात क्या हुई?" उसने पूछा।

"बात कुछ भी नहीं मजे में पड़े हुए हुक्का गुड़गुड़ा रहे थे मियाँ। उधर से एक कचालू वाला निकला तो उससे एक पैसे की

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

चाट लेकर खाई। जब कचालूवाले ने पैसे मांगे तो भौजी ने उठ कर इनके कुरते की जेब से निकाल कर दे दिये। बस जनाब, अब आप ये ख्याल फरमाएँ कि नवाब भाई जोश में आकर उठे और दे-दनादन दे-दनादन भौजी को मारना शुरू कर दिया। अब आप ही बताइये मियाँ कि इसमें भौजी की क्या खता थी? कौन इनकी कमाई में से उसने पैसा दे दिया, और फिर अपने ऊपर तो सरफा किया नहीं। जरा सोचने की बात है भाईजान, कि चहे इसकी बिक्री हो चहे न हो, एक रुपया रोज यह नवाब का बच्चा साला इसका सिर चीर कर ले जाता है। अभी कोई बचाने जाय तो मजा देखिये। हम ही गए तो उलटे हमारे ऊपर ही झपट पड़े। लेकिन क्या, यह कहो कि भौजी की वजह से ही गम खाकर चले आये, नहीं पीस दिया होता साले को चटनी की तरह से।"

क़ादिर मियां इधर बातें कर ही रहे थे, उधर जो देखा तो नवाब भाई दाढ़ी पर उँगलियों से कंघी करते हुए कन्धे पर कुरता रक्खे चले जा रहे हैं।

हिक़ारत की निगाह से अपने नवाब भाई की तरफ़ देखते हुए मियां कादिर ने धीरे से कहा, "बेईमान, काफिर साला!" और फिर हाथ झाड़ते हुए, भौजी की कोठरी की तरफ़ चले।

भौजी ज़मीन पर पड़ी सिसक रही थीं। दुपट्टा दूर पड़ा हुआ, सिर के बाल खुल गए थे, छाती जोरों से धड़क रही थी।

निहायत संजीदगी के साथ, उतरे हुए कंठ-स्वर से क़ादिर मियां ने कोठरी के दरवाज़े पर खड़े होकर आवाज़ दी, "भौजी!"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

भौजी और ज़ोर से सिसकने लगीं।

धीरे धीरे उनके पास बैठ कर उनका हाथ थपथपाते हुए धीरे से पूछा, "क्या बहुत मारा साले ने ? बड़ा कमीना है साला।"

भौजी कुछ बोली नहीं। हां, सिसकियों ने और ज़ोर पकड़ लिया।

हाथ पकड़ कर ज़ोर से उठाते हुए मियाँ क़ादिर ने कहा, "अच्छा अब उठो तो। क्या बताएँ भौजी, तुमने तो हमारे हाथ बांध रक्खे हैं। हम कहते हैं, जो तुम ज़री-सा इसारा भी दे दो तो साले की हड्डी-पसली एक कर दूँ। बड़ा सोरे-पुस्त बना है बेईमान, औरतों पर हाथ उठाता है।"

भौजी कुछ बोली नहीं। हथेली के सहारे अपनी ठोड़ी टिकाए चुपचाप आंसू बहाती रहीं।

बी ग़फ़ूरन भी आकर कमर पर हाथ रक्खे खड़ी होगईं, बोलीं, "ऐसा भी क्या मदुआ मुआ निठल्ला, जब देखो तब हाथ चला बैठा। दाढ़ी नोच ले ऐसे मुए की तो !"

तैश में आकर क़ादिर ने कहा, "ये तुम क्या कहती हो गफ़ूरन ? अमां, हम तुमसे कस्मियां कहते हैं कि भौजी अगर ज़री-सा इसारा भी दे दें तो साले को खोद कर गाड़ दूँ।"

"ऐ भइया, ये उसका मुए का कसूर नहीं। वही मरी-पीटी चुड़ैल जैसा नाच नचाती है वैसा ही वह बन्दर नाचता है। जोरू की कमाई पर सुबू-साम खाया, तोंद पर हाथ फेरा और दारू लेकर उस चुड़ैल के साथ मजे में पड़े रहे।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

"अरे, तुम क्या कहती हो, गफूरन ? कहो तो साली की नाक काट के आज ही फेंक दूँ। जादा से जादा और क्या होगा, बस छ महीने की सजा ही तो हो जाएगी ! सो वह भौजी की खातिर कोई बात नहीं। अरे हम तो..."

वैसे ही नवाब ने कोठरी में क़दम रक्खा और बोला, "हरामजादी ऐसे रो रही है, अपने हिसाब जैसे इसे मार ही डाला हो। चल उठ, चुपचाप बैठ, नहीं तो तीन लातें रसीद करूँगा, कमर सीधी हो जायगी।"

भौजी जोश में रोती हुई उठ खड़ी हुई, "ले मार ही डाल ! तुझे भी अपनी चहेती की कसम है, जो आज मुझे मार ही न डाले।"

दांत किटकिताते हुए नवाब मियां आगे बढ़े, "हैं, चहेती की कसम देगी ? चुड़ैल कहीं की। मेरी चहेती तेरी कौन हुई—बोल, बोल ?" ज़ोरों से दांत किटकिटाते हुए भौजी का एक गाल अपने बायें हाथ की चुटकी से दबाते, फिर तड़ातड़ तमाचे मारते हुये कहा, "बोल, मेरी चहेती की कसम देनेवाली तू कौन है ? हरामजादी ! आज तेरा खून पी डालूँगा।"

समूची शक्ति के साथ मियां कादिर और बी गफ़ूरन ने नवाब मियां को पकड़ कर अलग़ हटाते हुए कहा, "ये क्या कर रहे हो तुम ? गलीवालों को भी अपना तमासा दिखाना—हैं ! एक तो सरम आनी चहिए, जोरू के पैसे पर मजा काटते हो और दूसरे उसे ही मारते हो !"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

कसाई के हाथ से छूट कर भौजी ने मुँह पर बिखर आए बालों को समेटा और गडुए की नली लगाकर पानी गट-गट पीने लगीं।

अपने को इन दोनों के हाथों से छुड़ाने की पूरी कोशिश करते हुए नवाब मियाँ बोले, "छोड़ दो, छोड़ दो मुझे। तुम लोग इस बीच में बोलनेवाले कौन ?" बालों को फिर ऊपर की ओर हटाते हुए, रोकर भौजी बोलीं, "छोड़ दो कादिर इसे। मार लेने दो मरी-पीटे को। निकाल लेने दो उसके जी के अरमान।" कहकर भौजी जोश में आ पिटने के लिए खड़ी हो गईं।

मियां नवाब एक बार पूरी कोशिश के साथ अपने को क़ादिर और ग़फ़ूरन की बांहों से छुड़ाते हुए नवाबिन से फिर गुथ गए, 'जबान चलती है हरामजादी ! याद रखना, मेरा नाम है नवाब, टांगे चीर कर रख दूँगा—हां !"

तड़ातड़ आठ दस घूँसे और तीन-चार लातें उस वक्त तक नवाबिन के पड़ ही गईं जब तक कि ग़फ़ूरन और क़ादिर मिल कर उसे बचाएँ-ही बचाएँ। भौजी बदहोश सी होकर गिर गईं—मगर इस बार न आँखों में एक आंसू, न एक सिसकी—फ़क़त हँफ़नी काफ़ी तेज़ चल रही थी। इतनी तेज़, कि देखने वाले को यही शुबह होता था कि बस अब दो ही तीन मिनट में यह अपना दम तोड़ देंगी। किसी तरह हाथ से गडुआ खिसका कर गट-गट पानी के दो घूँट फिर पिये मगर इस बार उठ कर मार खाने की ताब उनमें न थी। पानी पीकर ज़ोर-ज़ोर से हाँफ़ते हुए अल्लाह और रसूल और ख़ुदा को दो-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

तीन बार याद कर फटी हुई आँखों से छत की कड़ियों को देखती हुई फिर ढेर हो गई।

क़ादिर और ग़फ़ूरन चुपचाप खड़े थे। फिर ग़फ़ूरन ने क़ादिर का हाथ खींचा और वे बाहर चले आये।

नवाब मियाँ ने टीन के बकस से नई लुङ्गी निकाली, गञ्जी बदली, कुरता कन्धे पर डाला, तुर्की टोपी सिर पर रक्खी और कहा, "अच्छा, अब अपने नखरे खतम कर।...एक आठ आने पैसे तो दे जल्दी से। देना तो, बेगम साहब।"

उसके पास बैठ कर अपने बाएँ हाथ से उसकी पीठ सहलाते हुए कहा, "आज मेरे हाथ में न जाने कौन-सा सैतान समा गया। और तुम भी तो बस पागलपना कर बैठती हो। हजार बार समझा दिया, यह हाथ साला जब से कट गया है, तुम तो जानती हो कैसी तकलीफ हमें होती है। अब लहचार हूँ। नहीं तुम्हें भला इतनी मसक्कत करनी पड़ती? अच्छा होगा। हाँ उठिये तो मेरी बेगम साहबा। मेरी महरानी जी।"

महरानी जी ज़ोर-ज़ोर से सिसकने लगीं। कोई दस मिनट तक नवाब मियाँ अपनी बेगम साहबा की ख़ुशामद करते रहे, लेकिन जब वह न उठीं, न पैसे ही दिये और न कुछ जवाब ही दिया तब तैश में आकर खड़े होगये। कहा, "घण्टा भर से रानी जी, महरानी जी कर रहा हूँ। बड़ी आई वहां से महरानी जी बन कर। अच्छा, अब उठती है कि लगाऊँ तीन लातें—हवास ठिकाने आ जायँ।" कह कर उन्होंने उसका हाथ पकड़ कर उठाना चाहा लेकिन नवाबिन

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

छिपकली की तरह ज़मीन पर जैसे पंजे गड़ा कर चिपक गईं—न उठीं। "कहता हूँ, उठ कर सीधी तरह पैसे दे दे, नहीं तो···अभी क्या मारा है, वह डंडे बरसाऊँगा कि बस !"

नवाबिन पर इसका भी कुछ असर न हुआ। नवाब ने उसका एक हाथ पकड़ कर पसली में ठोकर लगाते हुये कहा, "उठती है कि नहीं, हरामजादी !"

नवाबिन जान छोड़ कर चीख़ उठी, "अरे, मेरे अल्ला, मार डाला रे !"

ठोकर की चोट ने नवाबिन को बुरी तरह तिलमिला दिया था।

ग़फ़ूरन झट से उसकी कोठरी में घुस आई और चीख़ कर बोली, "ये क्या कर रहा है कसाई। अरे अब तो उसकी जान छोड़दे काफ़र।"

उसकी बात का जवाब न देकर नवाब ने नवाबिन से फिर कहा, "अच्छा देती है कि नहीं। या लगाऊँ—"

ग़फ़ूरन तड़प उठी, "ले, पैसे लेगा न ? कसाई कहीं का ! छोड़ उसकी जान, ले यह।" कह कर ग़फ़ूरन ने अपनी कमर से बटुआ निकाल कर उसके सामने रुपया फेंक दिया।

नवाब ने चुपचाप रुपया उठाया, एक बार नवाबिन की तरफ़ देखा, फिर चला गया।

ग़फ़ूरन उसके पास बैठ कर पंखा झलने लगी। इस बार नवाबिन सचमुच बेहोश हो गई थीं।

... ...

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

रात के कोई आठ नौ बजे क़ादिर मियाँ घूम कर गाते हुए लौटे, "मुझे लैला तेरी अदाओं ने मारा।"

भौजी ने अपनी कोठरी से आवाज़ लगाई, "अमाँ कादर !"

"हाँ, क्या है भौजी !" क़ादिर मियाँ घर की चौखट से लौट आए।

चमेली का हार गले में पड़ा था, जुही का गजरा हाथ में लपेटे हुए, नया पम्प जूता पैरों में, और सिर पर बढ़िया दुपलिया टोपी। मियाँ क़ादिर पान चबाते हुए आए। भौजी बैठी पान लगा रही थीं। बोलीं, "ऐ-है, आज तो तुम बड़े खबसूरत जँच रहे हो, कादर ! आज हमारे यहाँ ही रह जाओ।"

सिगरेट के टुन्ने का एक क़श ज़ोर से खींच कर मियाँ क़ादिर ने सिगरेट को जूते से मलते और धुँआ छोड़ कर मुस्कुराते हुए कहा, "अभी आया। जरी लिवण्डर की सीसी ले आऊँ बजार से।"

कमर पर हाथ रख नाक सिकोड़ फिर फीकी हँसी हँसते हुए भौजी ने कहा, "लिवण्डर-फिवण्डर नहीं, जरी-सा हल्दी-चूना पकाते लाना। अल्ला कसम, बड़ी मार मारी है मरीपीटे ने आज।"

एक दर्द-भरी हल्की सी अंगड़ाई लेकर भोजी फिर मुस्करा दीं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

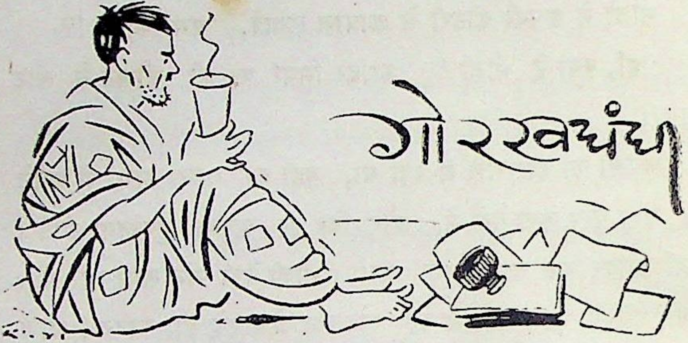

फटी हुई अलवायन ओढ़ कर एल्मुनियम के पिचके-दुचके गिलास में चाय पीते हुए सतीश को सहसा अपनी ग़रीबी पर तरस आने लगा। उसके पिता यद्यपि रईस नहीं थे, फिर भी पचास रुपया महीना तो पाते ही थे। उनके ज़माने में टूट जाने पर चाय का प्याला तो दुबारा ख़रीदा ही जा सकता था।

आज दो बरस से सतीश को पैसे-पैसे की तंगी है। वह बेकार है, यह कहना उसके प्रति अन्याय करना होगा। सवेरे से शाम तक काम करते-करते थक जाता है—कभी किसी दफ़्तर के लिए बैठा अर्ज़ी लिख रहा है, तो कभी किसी 'बड़े बाबू' के तलवे चाट रहा है। बीबी के कई गहने गिरवीं रख कर उसने कई बार सरकारी महक़मों के 'कम्पिटीटिव' इम्तहानों की फ़ीस दाख़िल की, मगर वे रुपये सरकार के ख़ज़ाने में उसी तरह जमा हो गये जैसे कि उसकी पत्नी के गहने महाजन के सेफ़ बॉक्स में।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

दो दिन पहले की बात है, उसके दोनों बच्चे चीनी के प्याले में चाय पीने के लिए मचल उठे थे। मार-पीट, छीना-झपटी, रोना-चिल्लाना हुआ--गर्ज़ की तश्तरी और प्याला दोनों ही शहीद हो गये।

उस दिन चाय पीते समय वह सोचने लगा कि उसका सहपाठी मनोहर, जो अब सैनिटरी इन्स्पेक्टर हो गया है, इस वक्त अगर संयोग से दौरा करता हुआ इस मुहल्ले में निकल आये तो इस एल्मुनियम के भद्दे गिलास में चाय पीते देख वह क्या सोचेगा? ख़याल आते ही उसे अपने बड़े लड़के पर गुस्सा आ गया। तेज़ी से आवाज़ दी, "प्रेमू!"

प्रेमू जैसे ही बैठक में आया, गली में जलेबीवाले ने आवाज़ लगायी। पाँच बरस का प्रेमू जलेबी खाने के लिए मचल उठा। सतीश ने पहले तो उसे डाटने की कोशिश की, जब वह न माना तो समझाना शुरू किया। उस जलेबीवाले की जलेबियों में ख़राबियाँ बताने लगा, चाय के दो एक घूँट भी उसे पिला दिये।

जलेबीवाला गली में सामने ही खड़ा हुआ प्रेमू को प्रलोभन दे रहा था। सतीश सोचने लगा कि अभी एक ही विद्रोह पूरी तरह नहीं दबा और यदि इसी बीच में कहीं रामू भी आ गया तो ग़दर मच जाने में कोई शंका न रहेगी।

उसे जलेबीवाले पर क्रोध आ गया। फटी अलवायन उतार कर दरवाज़े के पास जा जलेबीवाले को डाँटा, "जलेबी बेचने के लिए क्या तुम्हें यही एक मुहल्ला मिला है जी, जो दस घण्टे से खड़े टें-टें कर रहे हो?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

"आप तो बाबू नाहक के लिए गुस्सा हो रहे हैं। मैं अपना सौदा बेच रहा हूँ, इसमें आपका क्या नुकसान है?"

सतीश झुँझला उठा। नुक़सान तो उसका सरासर हो ही रहा था। लड़का मचल रहा था और उसके पास पैसे थे नहीं, लेकिन ये सब बातें तो उस टके के जलेबीवाले से कही नहीं जा सकतीं। जब उसे कोई जवाब न सूझ पड़ा तो महज़ अकड़ क़ायम रखने के लिए डपट कर बोला, "नुकसान? नुकसान यही कि तुम फ़ौरन यहां से चले जाओ।"

जलेबीवाला भी गर्मा उठा। बोला, "वाह! अच्छे धौंस जमाने वाले आये साहब! आपके लडके के मारे कोई क्या अपना सौदा भी न बेंचे? आपके पास पैसे हों तो खरीदें नहीं तो अपना दरवाजा बंद कर के बैठ जायँ! मैं भला यहाँ से......"

सतीश आपे से बाहर हो गया। कुरते की बाँहें चढ़ा कर मुट्ठी बांधते हुए ज़रा आगे बढ़, लाल-लाल आँखें निकाल कर कहा, 'यह तुम कैसे कहते हो बदमाश कि मेरे पास पैसे नहीं! तू मेरी तौहीन करता है नालायक! निकल जा अभी मेरे मुहल्ले से नहीं तो, नहीं तो—"

नहीं तो वह क्या करेगा, या कर सकता है, यह उसे ख़ुद भी नहीं मालूम। बहरहाल, वह खट से खाँसने लगा।

महाभारत के इस द्रोणपर्व को सबेरे ही सबेरे सुन कर दो-तीन पास-पड़ोसी भी बाहर निकल आये। कारण पूछा। सतीश कहने लगा, "साला सड़ी हुई जलेबियाँ बेच रहा है, चर्बी मिले हुए घी की; और

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

ऊपर से मेरी तौहीन करता है, बेईमान ! इससे पूछिए, आखिर इसने मुझे समझा क्या है ? अभी हेल्थ-आफ़िसर से रिपोर्ट कर साले का चालान कराता हूँ।"

घी में मिलावट होने की पोल अनायास ही खुलते देख जलेबी-वाला बौखला गया। इधर उन आदमियों ने भी उसी को धमकाना शुरू किया। वह बड़बड़ाता हुआ चला गया।

बालों के ऊपर एक बार हाथ फेर सतीश ने सीना ज़रा फुला लिया। फिर जेब से एक बीड़ी निकाल, अन्दर जा उसे चूल्हे से सुलगाते हुए एक क़श खींच कर अपनी पत्नी राधा से बोला, "मैंने कहा, सुनती हो ? मैं जरा लाइब्रेरी जा रहा हूँ।"

वह दूसरी दालान में झाड़ू लगा रही थी। बोली, "सबेरे-सबेरे किससे उलझ पड़े थे आज ?"

सतीश ने अकड़ कर कहा, "जलेबीवाला था साला। यहीं रोज मेरी जान को आकर खलता है, कम्बख़्त। आज फटकार दिया बच्चू को।"

राधा बोली, "अरे वाह, तुम्हारे मारे मुहल्ले में क्या कोई अपना सौदा भी न बेचेगा ? ऐसी भी क्या कहीं की लाटसाहबी मिल गयी है जो उसे मुहल्ले से निकाल दोगे ? बेंचता है, बेंचने दो। तुम्हारा क्या ?"

सतीश झुँझला उठा, बोला, "तुमने तो मुँह बना कर कह दिया, बेचने दो। तुम्हारा क्या ? तुम तो बस लड़कों को पैदा कर के

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

छुट्टी पा गईं और यहाँ जब वे सबेरे-सबेरे उसे देख कर मेरी खोपड़ी पर सवार होते हैं तब मालूम होता है।"

"देखो जी, हजार बार मना कर चुकी हूँ, फ़िजूल के लिए मुझे सताया न करो। जब देखो तब मेरे पास घुस-घुस कर आते हो, लड़ाई-झगड़ा करते हो और ऊपर से बातें बनाते हो?"

राधा शादी से लेकर आज तक के संस्मरणों का पुलिंदा खोल कर बैठ गयी।

सतीश चुपचाप अपनी अलवायन सम्भालता हुआ बैठक में चला आया। कोट पहना, चप्पल पहनी, बैठक की कुण्डी चढ़ाई और लाइब्रेरी चल दिया।

(२)

आख़िरकार 'स्टेट्समैन' में एक मार्कें की ख़बर पढ़ने को मिली।

—एक चाय कम्पनी को एजन्टों की ज़रूरत थी। वेतन और और कमीशन दोनों ही तरह से कम्पनी रखने को राज़ी थी।

सतीश ने संतोष की एक सांस ली। कम्पनी का पता नोट किया और घर की तरफ़ चला। रास्ते में उसे यह निश्चय हो गया कि उसका यह तीर लग ही जायगा। वह सोचने लगा पहले तो तनख्वाह पर 'कनवेसिंग' की जायगी, बाद में जब उस चाय का काफ़ी प्रचार हो जायगा तब अपने लड़कों के नाम से 'प्रेमचन्द-रामचन्द' फ़र्म खोल कर उसकी सोल-एजेन्सी ले ली जायगी। कम्पिटीशन के ज़माने में माल तो उम्मीद है, उम्दा देंगे ही, खूब बिकेगी। तब फिर उसका जीवन भी सुखी हो जायगा। सतीश को उस सुख की कल्पना गुद-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

गुदाने लगी। लपकता हुआ घर आया। क़ागज़ निकाला, क़लम ढूँढी, फिर दावात की तरफ़ जो नज़र डाली तो सूखी मिली। पानी डालना भी फ़िज़ूल साबित हुआ, क्योंकि उस दावात में अकेला पानी इतनी बार पड़ चुका था कि अब ख़ाली पानी का रंग तो ज़रूर हलका आसमानी हो गया मगर लिखने क़ाबिल स्याही हरगिज़ न बन सकी।

बैठक से ही आवाज़ लगाई, "मैंने कहा सुनती हो? जरा एक पैसा तो देना। स्याही लानी है।"

राधा दरवाज़े के पास आकर बोली, 'मेरे पास सिर्फ दो ही पैसे हैं आज। दाल मँगानी है। अब भाई कहीं से कुछ लाओ, नहीं तो कल चूल्हा भी नहीं जल सकेगा यह मैं तुम्हें बताये देती हूँ।"

पैसे के प्रबन्ध की बात सुन सतीश खीझ उठा। बोला "क्या कहीं रुपयों का पेड़ लगा है जो जाकर तोड़ लाऊँ?"

शायद पति की बेबसी देखकर ही राधा चुपचाप चल दी। सतीश को अपनी तक़दीर पर उस वक्त रह-रह कर ग़ुस्सा आ रहा था। अगर उसके पास पैसा होता तो वह निश्चय ही, उसी दम दुनिया की तमाम ईश्वर-विरोधी संस्थाओं का सदस्य हो जाता। चाय की एजेन्सी उस वक्त उसके लिए एक बहुत बड़े आकर्षण की वस्तु हो रही थी। इस गूलर के फूल को हाथ में पाकर भी उसे छोड़ना पड़ रहा था, इसका उसे आन्तरिक क्लेश था।

उसने सोचा, फ़िलहाल पैसों का प्रबन्ध करने के लिए उसे किसी और काम की तलाश करनी चाहिए। नौकरी पाने की ओर से वह एकदम निराश हो चुका था। हर पहलू काफ़ी ग़ौर कर चुकने के

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

बाद सहसा उसके दिमाग़ में आया कि जब तक चाय की एजेन्सी की अर्ज़ी भेजने के लिए उसके पास एक आना पैसा नहीं आता तब तक के लिए अगर वह किसी बीमा कम्पनी की एजेन्सी ले ले तो कैसा रहे ?

इंश्योरेंस की एजेन्सी के तमाम फ़ायदे उसके दिमाग़ में चक्कर काट गये। उसका एक दोस्त इसी काम की बदौलत आज मोटर साइकिल पर सैर करता है। उसने सोचा अगर यह काम चल गया तो फिर वह चाय की भी एजेन्सी ले लेगा। दो घोड़ों पर सवार होगा। बड़ा फ़ायदा रहेगा। मकान की मरम्मत भी हो जायगी। प्रेमू रामू के कपड़े भी बन जायँगे। और उनकी माँ के सब गहने फिर बन जायँगे। बेचारी मुँह से कुछ बोलती भी नहीं। आख़िर वह भी जवान है। उसकी भी पहनने ओढ़ने की तबीयत होती है।

सब कुछ सोच समझ कर सतीश ने तय किया कि वह किसी बीमा कम्पनी की एजेन्सी ले लेगा। शहर में कई कम्पनियाँ हैं। सोचा, दो तीन की एक साथ ही लेने में काफ़ी फ़ायदा होने की गुञ्जाइश है। वह अर्ज़ियाँ लिखने बैठा।

"स्याही नहीं है, अच्छा कोई हर्ज नहीं, स्याही भी घर में ही तैयार कर लूँगा।" सतीश बड़-बड़ाता हुआ उठा, लालटेन लाया, उसकी कालिख खुर्च कर इकट्ठा की, दावात के नीले पानी में उसे घोला। मगर कालिख और पानी अलग ही अलग रह गये। स्याही फीकी रही। उसने सोचा, गर्म करने से शायद ठीक हो जाय। कटोरी में घोल कर वह उसे आग पर औटाने चला। राधा रोटी सेक रही

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

थी। दोनों लड़के बैठे खाना खा रहे थे। राधा ने पूछा, "यह क्या कर रहे हो?"

"बोलो मत, स्याही तैयार कर रहा हूँ।—दो तीन अर्जियाँ लिखनी हैं।"

एक ठंडी सांस ले कर राधा ने कहा, "अरे अर्जियाँ लिखते-लिखते तो दो साल बीत गये। कहीं से किसी मरी-पीटे का जवाब तक नहीं आता।"

सतीश काफ़ी प्रसन्न था। इस बात को अनसुनी-सी कर बोला, "अरे, इस बार ऐसा काम कर रहा हूँ कि पाँचों घी में होंगी, तब बैठी-बैठी मजा करना।"

स्याही औट कर ठीक होने लगी। सतीश के मन में एक और विचार उत्पन्न हुआ। शहर में स्याही की भी काफ़ी खपत होती है। दो-तीन स्कूलों के मास्टरों से भी उसकी जान-पहचान है। अगर वह स्याही बना-बना कर बेचना शुरू कर दे तो भी काफ़ी फ़ायदा होगा। नख़ास से कुछ बोतलें ख़रीद कर लाई जायँ। आसमानी, लाल रङ्ग वग़ैरा ख़रीदा जाय। बस, दो-तीन रुपयों की लागत में उसके पास कम-से-कम पचास बोतलें तो तैयार हो ही जायँगी। एक बोतल का दाम चार आना रखा जायगा। उसे साढ़े बारह रुपये मिलेंगे। पांच रुपये घर-ख़र्च के लिए रख कर वह फिर स्याही बनाने का सामान लायेगा। साढ़े तीन लाख की आबादी के शहर में वह कम से कम पचास बोतलें तो घूम घूम कर रोज़ बेच ही लेगा। पहले तमाम स्कूलों और कालेजों में 'सप्लाई' की जायगी, फिर दूकानदारों को और बाद

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

में अगर टिप्स लग गई तो शहर भर के सब सरकारी और गैर-सर-कारी दफ़्तरों में भी उसी की स्याही खपा करेगी। काम बढ़ने पर वह एक कारखाना भी खोल लेगा। नौकर भी रहेंगे। बाद में धूम-धाम से विज्ञापनबाजी कर वह देश भर में अपनी स्याही बेच सकता है। "स्टीफ़ेन्स' से अगर तगड़ी न रही तो काम ही क्या हुआ। आजकल स्वदेशी का बोलबाला है। वह साल-दो साल में काफ़ी कमा लेगा।

सतीश को ऐसा लगा कि उसकी क़िस्मत का सितारा अब जल्द ही चमकनेवाला है। मगर पहले रुपयों का प्रबंध करने के लिए उसे कोई न कोई काम करना ही पड़ेगा। उधार उसे अब मिल नहीं सकता क्योंकि राधा के पास अब एक भी ऐसा गहना नहीं बचा था जिसे गिरवीं रखा जा सके। लेकिन कोई हर्ज नहीं, पहले वह इन्श्योरेंस से रुपया पैदा करेगा।

स्याही तैयार हुई, किसी तरह अर्ज़ियाँ भी लिखी गईं। उसके पास एक धराऊ कोट और पतलून था जिसे वह हर 'इन्टरव्यू' में पहन कर जाता था। उसने सोचा बग़ैर चिकने चुपड़े बने इन्श्योरेन्स की एजेन्सी लेना ठीक नहीं। बड़े-बड़े आदमियों के पास जाना पड़ता है। जब तक एक-दम 'टिपटाप' न हो, बड़े आदमी किसी से बात भी नहीं करते।

घर में कपड़े धोनेवाले साबुन का एक छोटा-सा टुकड़ा था। सतीश मुँह धोने चला। गाल पर हाथ रखते ही ख़याल आया, हफ्ते भर से हज़ामत नहीं बनी। घर में ब्लेड ही नहीं था। इतनी बढ़ी हुई हज़ामतवाले को इन्श्योरेन्स का काम हरगिज़ नहीं मिल सकता, इसका

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

उसे निश्चय था। सिर्फ़ दो ही पैसे घर में थे, ब्लेड किसी तरह भी ख़रीदा नहीं जा सकता था। पास-पड़ोसी भी दफ़्तर चले गये थे।

वह बड़ी ज़ोर से झुँझला उठा। पहले तो मेहनत से तैयार की हुई अर्ज़ियां फाड़ीं, फिर स्याही की कटोरी उलट दी। हाथ में क़लम भी उठा लिया, लेकिन फिर कुछ समझ कर रुक गया और एक-दम छत में जा कपड़े उतार कर वह धूप में लेट गया। सिर्फ़ दो पैसों के बग़ैर उसके सैकड़ों रुपये के व्यापार का नुक़सान हो रहा था। उसे इस बात का काफ़ी मलाल था। दुनिया भर के कुलावे भिड़ाते-भिड़ाते अन्त में उसे नींद आ गई।

(३)

शाम को तफ़रीह के ख़याल से सतीश बाज़ार की तरफ़ चला। एक दोस्त की बिसातख़ाने की दूकान थी। पान खाने की गरज़ से सतीश वहीं बैठ गया। इधर-उधर की बातें चल रहीं थीं, तभी एक अंग्रेज़-महिला हाथ में बेग लटकाये दूकान पर आयीं। एक कम्पनी लखनऊ-डायरेक्टरी प्रकाशित करने जा रही थी। मेम साहब आख़िर-कार मुस्करा-मुस्करा कर विज्ञापन ले ही गईं। उनके जाने पर मित्र महोदय कहने लगे, "यह पांच रुपये खल गये, उस्ताद! मगर उस लेडी को भला कैसे मना कर देता?'

थोड़ी देर इधर-उधर की बातें कर सतीश घर वापस चला आया। बाज़ार की चहल-पहल जैसे उसे ज़हर मालूम पड़ रही थी।

घर आया। राधा ने खाने के लए कहा। सतीश उस वक्त अपनी ख़याली-दुनिया में घूम रहा था। कुछ अनमना-सा होकर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

बोला, "ढक कर रख दो। मुझे भूख नहीं है। सबेरे लड़कों के लिए काम आ जायगा।"

चारपाई पर वह काफ़ी देर चुपचाप पड़ा रहा। एकाएक उसकी आँखें चमक उठीं। खट से बैठते हुए आवाज़ दी—"मैंने कहा, सुनती हो?"

चौके बरतन से छुट्टी पाकर राधा रसोई-घर में खाना ढक रही थी। बोली—"सुनती हूँ; अभी आई।"

"अरे भई अब देर न करो। तुमसे एक बड़ा जरूरी काम है। मतलब यह है कि फ़ौरन चली आओ। ये घर के धन्धे तो रोज ही लगे रहते हैं।"

राधा इतमीनान से ही आई। बोली, "क्या कहते हो?"

"अरे, पूछो मत, मैंने एक ऐसी बढ़िया बात सोची है कि बस चार दिन में ही यह सब तकलीफ़ें दूर हो जायँगी।"

राधा ज़रा अक्खड़पन के साथ बोली, "वह चाहे बढ़िया बात हो या घटिया—मैं साफ़ कहे देती हूँ, मेरे पास अब सोने-चाँदी का एक तार भी नहीं जो तुम्हें दे सकूँ। सब कुछ तो बटोर कर ले गये।"

सतीश को यह बेवक्त की भैरवी बुरी लगी; झुँझला कर बोला, "अरे बाबा तो तुमसे माँग कौन रहा है? मैं तो एक दूसरी बात कहने जा रहा था और तुम······"

सन्तोष की साँस ले, ज़रा नर्म पड़कर राधा ने कहा, "क्या कह रहे थे?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

"बात यह है कि आज मैंने बड़े मजे की बात देखी।"

"क्या ?"

"परसोतम की दूकान पर बैठा था। इतने में जनाब एक मेम आयी। मैं समझा कुछ खरीदने आयी होगी। मगर भाई, वह तो आते ही आते ऐसी फ़र्राटेदार बात करने लगी कि कुछ पूछो मत। कहने लगी, देखिए यह बड़ी अच्छी किताब छप रही है और इसमें आप अपना विज्ञापन जरूर दें। आपका बड़ा नाम हो जायगा। बड़े-बड़े आदमी इसे पढ़ेंगे। आपकी दूकान चल निकलेगी। इस तरह की उसने तीन-सौ-बीस बातें बनानी शुरू कीं। अब परसोतम बेचारे से 'नाहीं' करते न बन पड़ा। चुपचाप पाँच रुपये निकाल कर दे दिये।"

राधा ने लापरवाही के साथ मुँह बनाकर कहा—"अरे ये मेमें बड़ी चरबाँक होती हैं।"

"चरबाँक की बात नहीं। देखो तो, कैसे मजे में खट से पाँच रुपये पैदा कर ले गई! इसी तरह उसने न जाने दिन भर में कितने रुपये पैदा कर लिए होंगे।"

राधा ने कोई उत्तर न दिया।

थोड़ी देर चुप रह कर सतीश बोला—"मैंने कहा, अगर हिन्दुस्तानी औरतें भी इसी तरह काम किया करें तो बड़ा अच्छा हो।"

राधा बोली—"हिन्दुस्तानी बेचारी को कौन पूछेगा? न तो वे मेमों की तरह खबसूरत होती हैं और न उनका-सा छत्तीसापन ही उन्हें आता है।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

सतीश एक क्षण रुक कर फिर कहने लगा—"मगर भई, सच कहता हूँ कि तुम उस मेम से भी लाख गुना ज़्यादा खूबसूरत हो।"

राधा होठों में ही मुस्कराई, कहा—"अरे जाओ भी, बहुत बातें न बनाया करो ! भला कहाँ मेम और कहाँ मैं ?"

"लो तुम मज़ाक समझ रही हो। मैं तुम से बिलकुल सच कहता हूं, अगर भगवान् की दया से तुम्हें जरा सुख मिलने लगे तो लाखों में एक निकलो, मगर यह कहो कि नसीब से मेरे पाले पड़ गईं वरना तुम तो रानी बनने लायक हो रानी !"

राधा रानी ने हमदर्दी दिखाते हुए कहा—"मुझे रानी बनने की चाह नहीं। मैं अपने घर में ही सुखी हूँ। भगवान् करे, तुम बने रहो, मुझे और कुछ न चाहिए। तुम क्या कुछ कम खबसूरत हो, मगर यह कहो कि चिन्ता डायन तुम्हें खाये डाल रही है।"

कहते हुए उसने एक निश्वास छोड़ दी।

सतीश ने मौका देखा। कहा—"मैंने एक बात सोची है। अमीना बाद में मैजिक लालटेन से स्लाइड दिखाये जायँ। बड़ा फ़ायदा रहेगा। हर दूकानदार से पांच रुपया महीना चार्ज किया जाय। महीने भर में कम से कम सौ रुपये की आमदनी तो हो ही जायगी।"

राधा की आँखें चमक पड़ीं। कहा—"तो फिर क्यों नहीं करते ?"

"भई, बात यह है कि यह काम अकेले मेरे बूते का नहीं। अगर तुम भी जरा मदद करो तो कल से ही शुरू कर दूँ।"

"मैं भला इसमें तुम्हारी क्या मदद कर सकती हूँ ?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

सतीश गम्भीरता के साथ बोला—"सुनो, अब हम लोग बहुत तकलीफ़ें उठा चुके। तुम अब ये सब हया-शरम छोड़ो। मैं तुम्हें दो-तीन दिन के अन्दर शहर की सब बड़ी-बड़ी दूकानें दिखा दूँगा। सब कायदे-कानून भी समझा दूँगा। बस, फिर तुम सब से मिल कर विज्ञापन ले लेना। एक औरत को देख कर सब चुपचाप रुपये निकाल कर दे देंगे, समझीं? बस फिर मजे में जिन्दगी बीतेगी।"

"चलो हटो। बहुत ज्यादा फिजूल की बकबक न किया करो। अहा-हा, बड़ा अच्छा मालूम पड़ेगा जब मैं दूकान-दूकान घूमती फिरूँगी। चार बिरादरीवाले तुम्हारी खूब तारीफ करेंगे!"

"अरे बिरादरीवाले जायँ चूल्हे में। भला इसमें बुराई ही क्या है! अपना पेट पालते हैं, कोई चोरी-बदमाशी तो करते नहीं।"

"वह चाहे जो कुछ भी हो, मैं इस तरह नहीं घूम सकती। भूखों मर जाना कबूल है, मगर इस तरह अपने बाप-ससुर का नाम मैं नहीं उछाल सकती। तुम्हारा क्या, तुमने तो सब हया-शरम अब भून खाई है।"

"इसमें हया-शरम की क्या बात है? मेमों को देखो, इस तरह लाखों रुपया पैदा कर लेती हैं। अमरीका, जापान, जर्मनी—सब जगह ऐसे ही होता है। हमारे देश में इसे बुरा समझते हैं, तभी तो यह गरीबी भुगतनी पड़ती है। कोई काम नहीं चलता। हमारी औरतें तो दुनिया भर का ढकोसला ले कर बैठ जाती हैं। कायदे की बात कहो तो बाप-ससुर का नाम उछलने लगता है, साहब।" सतीश ने खीझ कर कहा।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

राधा भी गर्मा उठी। बोली—"तो फिर किसी मेम से ब्याह क्यों नहीं कर लेते ? वह गली-गली कमाती फिरेगी ! तुम बैठे-बैठे मजा करना।"

धीरे-धीरे बात का बतंगड़ बनने लगा। अन्त में हार कर सतीश ने हाथ जोड़े, कहा—"अच्छा बाबा, माफ करो। गलती हुई। मैंने तो एक कायदे की बात कही थी। यह सब दुख-दलिद्दर दूर हो जाता। मगर तुम—खैर।"

सुलह तो हो गई, मगर सतीश को रात भर मलाल रहा। उसने इतनी अच्छी स्कीम सोची थी कि अगर विलायत में पैदा हुआ होता तो लाखों कमा लेता।

(४)

तड़के ही उठ कर सतीश कई जगह ट्यूशन की तालाश में गया। लौट कर पड़ोसी से ब्लेड लिया। हज़ामत बनाई, कपड़े पहने। बीमा कम्पनियों में गया; एजेन्सी, प्रोपोज़ल फ़ार्म, प्रास्पेक्टस वग़ैरा ले कर दिन भर कई सेठों के यहाँ 'कनवेसिंग' करता रहा। मगर सब मेहनत बेसूद—बेकार। सतीश खीझ उठा। ढाई बज रहे थे ! भूख कड़ाकेदार लग रही थी। सतीश घर की तरफ़ चला। दरवाज़े पर ही म्युनिसिपॅलिटी 'का आदमी आवाज़ लगा रहा था था। पूछने पर मालूम हुआ टैक्स अदा न करने के सबब से वह पाइप का 'कनेक्शन काटने के लिए आया है।

झुँझलाया हुआ तो था ही, सतीश एकदम चीख़ उठा—"ले साले, काट डाल बम्बा। अब नहीं पियेंगे पानी। ले काट।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

सतीश ने आगे बढ़ कर ख़ुद ही बम्बे का ख़ज़ाना खोल दिया, फिर तेज़ी से घर के अन्दर जा राधा से बोला, "सुनती हो जी, बम्बा कट रहा है।"

वह बिलकुल चुप रही। सतीश भी चुपचाप चारपाई पर आँखें बन्द कर लेट रहा।

आध घण्टे बाद उसने धीरे-से उठ कर कहा—"सुनती हो भई, अब ये तकलीफ़ें तो मुझसे नहीं सही जाती। चलो कांग्रेस में नाम लिखा लें। मिनिस्ट्री अब ख़त्म हो ही गई है। आन्दोलन छिड़ेगा ही। अरे कम से कम जेल में रोटियाँ तो मिल ही जायँगी।"

राधा हँसी, बोली, "और ये बच्चे?"

सतीश ने छूटते ही जवाब दिया, "मैंने सोच लिया है। इन्हें किसी अनाथालय में भेज दूँगा।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

क़रीब-क़रीब रोज़ ही ऐसा होता है कि मैं रात के आठ-नौ बजे अपने बिस्तर पर आराम से लेट कर पढ़ता हूँ, और मेरे चिरञ्जीव आकर उसमें बाधा डालते हुये मुझ से कहानी सुनाने का आग्रह करते हैं। अक्सर मैं इस बात पर ग़ौर करता हूँ, लेकिन समझ में कुछ नहीं आता। बेबी की उम्र इस समय केवल चार वर्ष की है। बड़ा होने पर यदि वह इस प्रकार का आग्रह करेगा, तब तो मैं निश्चयपूर्वक ही यह कह सकूंगा कि वह अपने परम पूज्य पिता के कहानीकार होने की विशेषता से परिचित है। लेकिन इस समय तो ऐसा सोचना भी शायद उसके लिये सम्भव नहीं।

कहानी सुनाने के लिये वह मुझसे ही आग्रह करता हो, वह भी नहीं। उसका यह पेशा है। कभी दादी के रसोईघर में घुसकर उनकी पीठ पर लद कर कहानी सुनाने की ज़िद करता है, अथवा कभी अन्धी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

परदादी के हाथ पर पड़ी हुई झुर्रियों को मिटाने की चेष्टा करते हुए उनसे कहानी सुनाने का हठ करता है।

बहरहाल कोई न कोई उसे कहानी सुना ही देता है—"एक राजा था, एक रानी थी, लेकिन उनके कोई सन्तान न थी।"

राजा, रानी अथवा सन्तान की विशेषता को कुछ न समझता हुआ भी बेबी गम्भीरतापूर्वक सिर हिला कर कहता है—"हूँ!"

कहानी मन्थर गति से आगे बढ़ जाती है। कभी-कभी कहानी सुनाते सुनाते मेरी दादी ऊँघने लग जाती हैं, तब वह एक क्षण तक उनकी फूटी आँखों की तरफ़ ग़ौर से देखने के बाद, उनका हाथ हिला कर कहता है—"हाँ, अम्मा जी, और?"

अम्मा जी एकाएक जाग कर कहने लग जाती हैं—"एक राजा था, एक रानी थी और.........।"

बेबी जैसे ऊब उठता। यह तो उसे भी मालूम हो चुका है कि एक राजा था और एक रानी थी। पर वह उसके बाद की कथा जानना चाहता है।

मेरी दादी अपने छोटे-से श्रोता को कहानी सुनाते समय शायद बहुत समझदार खयाल कर लेती हैं। वह बतलाती हैं—'राजा बड़े दुखी रहा करते थे। एक दिन उन्होंने अपने मन्त्री को बुलाया और उसे सारा राज-पाट सौंपते हुए कहा कि मैं किसी जङ्गल में जा कर तप करूँगा।

"राजा राज-पाट और रानी को छोड़ कर चले। आगे था एक घना जङ्गल—बड़े बड़े शेर-चीते और भालू....."

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

और बेबी बीच ही में उन्हें टोक कर हाथ का घेरा बना बताता है--"और बड़े बड़े बन्दर! इतने इतने बड़े। क्यों अम्मा जी?"

अम्मा जी को अपनी कथा में उसी समय हिन्दी पत्र के सम्पादकों की तरह क्षमा-याचना के साथ भूल सुधार करनी पड़ती है।

बेबी पूछता है—"पहले बन्दर क्यों नहीं बताया था?"

यहाँ यह बता देना बहुत आवश्यक है कि बेबी को बन्दरों से बड़ा प्रेम है। गोस्वामी तुलसीदासजी के कथनानुसार 'बिनु भय होत न प्रीत' के आधार पर ही उसे बन्दरों से प्रेम हो गया।

कहानी फिर आरम्भ होती है--"भालू थे, शेर थे, बन्दर थे..."

बेबी गम्भीर मुद्रा के साथ कहता—"अम्मा जी, छरत बन्दर है—बाबू जी कहते हैं छरत बड़ा बन्दर है।"

अम्मा जी कहती हैं—"नहीं, शरत बड़ा राजा बेटा है।"

"नहीं, बाबू जी कहते हैं छरत बन्दर है। अम्मा जी, छरत हमें मारता है, उसे कहानी मत सुनाइयेगा और मोटर भी नहीं, और ईफक-फक भी नहीं।"

इसी बीच में यदि कभी मैं अथवा मेरे दोनों भाई संयोगवश कवि-सम्मेलन में जाने वाले बेबुलाए तुक्कड़ों की तरह वहाँ पहुँच गये तो बेबी को नाग़वार ख़ातिर होने लगता है। वैसे तो चाहे वह हम लोगों के आ जाने का बुरा न माने परन्तु हमारी टीका-टिप्पणियां उसे अक्सर खटक जाती हैं और ख़ास कर उस समय तो बहुत, जब कि वह अपनी अम्मा जी को बताता है कि बाबू जी शरत को बन्दर कहते हैं और ख़ुद बाबू जी कह देते हैं, "शरत बड़ा राजा बेटा है। अम्मा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

जी, मैं शरत को बम्बई ले जाऊँगा, और शिमला भी, और कलकत्ते भी।"

बेबी अनखना कर शिकायत करता है— "देखो अम्मा जी, बाबू जी कहते हैं कि छरत को बम्बई ले जायंगे।"

अम्मा जी कहतीं—" तो ले जाने दो शरत को। शरत तुम्हारा मुन्ना सा भाई है न!"

एक क्षण तक मौन रह कर बेबी मानो शरत के बड़े भाई होने के गौरव की महत्ता का अनुभव करता है।

अम्मा जी तब कहानी कहना भूल कर शाम के भोजन के लिये कौन-कौन सी तरकारियाँ बनें, इस पर सलाह करने लगतीं हैं।

भूली बात याद आने पर जैसे कोई चौंक उठता है, बेबी भी ऐसे ही मौक़ों पर अम्मा जी का हाथ हिला कर कहता है—" अम्मा जी कहानी......"

अम्मा जी सब बातें भूल कर कहानी तीसरी बार कहना शुरू करती हैं—"एक राजा था, उसके सात रानियां थीं। सबसे बड़ी रानी का नाम 'कौवा-हंकनी' था। राजा अपनी छोटी रानी को बहुत चाहता था। एक बार राजा जहाज पर सामान लाद कर बाहर चला......"

बेबी को फिर जैसे कुछ याद आ जाता। वह पूछता—" अम्मा उनके छन्तान नहीं थी?"

पोपले मुँह से हँसते हुए अम्मा जी अपने छोटे-से श्रोता को उत्तर देती हैं—" अरे हाँ रे, यह तो मैं भूल ही गई थी।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

अम्मा जी के इस भूल जाने और हंस देने पर बेबी को इतनी प्रसन्नता है जितनी कि शायद हिसाब का पर्चा ख़राब हो जाने पर भी हाईस्कूल की परीक्षा में अपने को पास हुआ देख। कर मुझे न हुई थी। वह झटपट पलंग से कूद कर उछलता और हँसता हुआ रसोई-घर में जा कर अपनी दादी से कहता है—"भाभी, अम्मा जी भूल गई थीं—लाजा के छन्तान नहीं थी।"

बेबी की दादी भी जैसे अपनी सास की हार और पोते की जीत से बड़ी प्रसन्न हो उठतीं और उसका मुँह चूमते हुये हँस कर कहतीं—"अरे, बेबी जीत गया। वाह भई वाह, बेबी ने तो अम्मा जी को हरा दिया।"

अपनी इस जीत पर बेबी तालियां बजाता हुआ घर में दौड़ता फिरता है। घर भर में हर एक को यह ख़ुशख़बरी सुनाता है।

(२)

कहानी सुनाने का आग्रह वह मुझसे भी करता है। मैं अपने को पढ़ा-लिखा और समझदार समझता हूँ; और ख़ास कर जब से मेरी चार पाँच किताबें छप चुकी हैं, तब से तो मैं अपने को दुनिया की तीन हिस्सा बुद्धि में आधे का हक़दार मान कर हर एक 'जूनियर' लेखक को चेख़व और डोस्टावेस्की से लेकर चार्ल्स डिकेन्स और मार्क ट्वेन तक का पूरा साहित्य पढ़ जाने की हिदायत देता रहता हूँ। अक्सर वे लोग जब मुझसे उनकी रचनाओं के नाम पूँछते हैं तब ज़रा दिक़्क़त मालूम होती है, फिर भी चार-पाँच किताबों के नाम गिना जाने के बाद यह कह देने से—

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

'इतनी अधिक किताबें मैं अब तक पढ़ चुका हूँ कि अब तो नाम भी याद नहीं रहते'—धाक जमी रहती है। इस तरह औरों पर तो मैं अच्छी तरह रोब गांठ लेता हूँ. परन्तु बेबी से वश नहीं चलता। न उसे टॉल्सटाय और तुर्गनेव से ही मतलब है और न रवि ठाकुर या निराला की रचनाओं ही से।

निराला जी से तो उसको ख़ासी दोस्ती भी है। बाल उसके भी बड़े-बड़े हैं। अक्सर तौलिया से लेकर माँ की मैली धोती तक लपेट कर मेरे सामने आ हँस कर कहता है—"बाबू जी, देखिये मैं निराला जी बन गया।" फिर कमरे में टहल टहल कर जब गाता है:

घण्टा-घर की चार घड़ी,
जब वह घण्टा बजता था—
थका मुसाफ़िर जगता था।

तब मुझे ऐसा लगता है कि बेबी सोलह बरस की उम्र में कहीं 'जुही की कली' के सुप्त सौन्दर्य का पारखी न बन बैठे। परन्तु अभी तो गद्य की ओर ही उसका झुकाव मालूम होता है। और गद्य भी बीसवीं सदी का—अलंकार उपमा-विहीन। सीधी-सादी भाषा में बीबी फ़ातिमा से लेकर शेर-लोमड़ी तक की कहानियाँ उसे पसन्द आती हैं।

जब वह मुझसे कहानी सुनाने का आग्रह करता है तब मैं ऐसी कहानियाँ गढ़ने की कोशिश करता हूँ जिससे मनोरञ्जन के साथ साथ कुछ शिक्षा भी मिलती चले। कहानी शुरू होती है—"एक राजा था, एक रानी थी। उनके पास एक कैट थी।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

यहाँ पर एक क्षण के लिये रुक कर मैं उससे प्यार के साथ पूछता हूँ--"बेबी कैट माने !"

बेबी बतलाता है—"सी-ए-टी-कैट--कैट माने बिल्ली।"

हॉर्स से लेकर मंकी और डंकी तक के "हिज्जे और माने" बतलाते बतलाते वह ऊब सा उठता है। इसके पहले कि मैं राजा-रानी को एलीफेन्ट माने हाथी पर सवार कराऊँ वह अपना पेटेन्ट प्रश्न कर बैठता है—"बाबू जी, उनके कोई छन्तान नहीं थी ?"

तब मुझे एक सन्तान भी पैदा करनी पड़ती है।

कहानी फिर यों शुरू हुई--"एक राजा था, एक रानी थी, उनके एक सन्तान भी थी......"

बेबी एकाएक पूछ बैठता है—"बाबू जी, हमको कलकत्ते ले चलिएगा !"

उस समय कहानी के द्वारा मैं उसे कुछ शिक्षा देना चाहता हूँ, परन्तु वह कलकत्ता, बम्बई और शिमला की बातें करने लगता है।

मैं उससे कहता हूँ—"अच्छा, मुझे एपिल माने बता दो तो तुम्हें कलकत्ते ले चलूँ।"

वह झटपट बतलाता है—"ए-पी-पी-एल-ई, एपिल—एपिल माने सेव। बाबू जी, छोटी मुन्नी को भी कलकत्ते ले चलिएगा न !"

छोटी मुन्नी से उसकी गहरी दोस्ती है। छोटी मुन्नी के बाप से मेरी भी गहरी दोस्ती है; और इतना ही नहीं, बेबी और छोटी मुन्नी की माताएँ भी सुना है, एक दूसरे के गले में बाहें डालकर हँस-हँस कर प्रेम से अपने पतिदेवों की बुराईयों का विवेचन करती हैं। बहर-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

हाल, यहाँ पर सब कहने का उद्देश्य यही है, कि अकेले बेबी और छोटी मुन्नी में ही नहीं, बल्कि दोनों के ख़ानदानों में यह मैत्री सम्बन्ध लगभग तीन पीढ़ियों से चला आ रहा है।

बेबी फिर कहता है—" बाबू जी, छोटी मुन्नो जरूर जरूर कलकत्ते जायगी।"

मैं उसे आगे की कहानी सुना कर सौ तक गिनती गिनवाना चाहता हूँ, परन्तु जैसे वह उसके आगे और कुछ सुनना पसन्द नहीं करता। राजा, रानी और सन्तान के आगे, अगर सन्तान की सन्तान भी पैदा हो जाय तो उसे कोई आपत्ति न होगी, परन्तु उसके बाद सन्तान से सौ तक गिनती गिनवाने पर उसे छोटी मुन्नी के साथ कलकत्ता भ्रमण की सूझने लगती है।

एक दिन जब मैं दिन में किसी काम से अकस्मात ही ज़नानख़ाने में गया तो देखा, बेबी छोटी मुन्नी से कह रहा था—"हम लाजा, तुम लानी, और छरत छन्तान।"

इसके बाद वह रेलगाड़ी में चाभी भर कर कलकत्ते जाने की तैयारी कर रहा था, तभी शरत ने मुझे देख लिया और 'बा-बा' करता हुआ घुटनों के बल मेरे पास दौड़ आया; राजा और रानी भी मुझे देख हंसते हुए आकर मेरी पीठ पर लद गए, और कहानी सुनाने की ज़िद शुरू कर दी।

अक्सर ऐसे मौक़ों पर तीनों बच्चों से घिरा हुआ मैं कहानी सुनाता हूँ—" एक राजा था, एक रानी थी........

तब मुझे कहानी की आड़ में शिक्षा देने की नहीं सूझती।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

नवाबी चक्कर

कहते हैं, ख़ुदावन्दकरीम जब किसी को कुछ देना चाहता है, तो पहले उसका छप्पर फाड़ डालता है; मगर जनाब, यहां तो उसने मेरी क़मीज़ पर ही हाथ साफ़ किया।

क़िस्सा यों है कि कलकत्ते की सिन्दुरिया पट्टी के मोड़ पर खड़ा पान खा रहा था। एकाएक ऐसा मालूम पड़ने लगा कि मेरे बग़ल में लखनऊ के मशहूर ताज़िर इत्रफ़रोश असग़र अली मोहम्मद अली की ब्रांच नहीं, तो एजेन्सी तो ज़रूर ही खुल गयी है। जो नज़र घुमा के देखता हूँ तो वल्लाह, आँखें जुड़ीं, कलेजे को ठण्डक पहुँची। एकदम ख़याल मुझे लखनऊ के चौक में दौड़ा ले गया। इन ढीली धोती और पगड़ीवाले बङ्गालियों और मारवाड़ियों के शहर में वह चुस्त चपकन, वह सुरमीली आँखें, वह क़ाकुलें—बस आपसे क्या अर्ज़ करूँ, दिल ने चाहा कि उस अदा पर वहीं अपने को सौ बार क़ुर्बान कर दूँ। नवाब साहब भी पान खाने के लिये ही खड़े हुए थे। सीने पर लगी हुई पतली-सी जेब में, ज़रा कमर झुकाकर, इस नज़ाक़त के साथ, उन्होंने दो उङ्गलियां डालकर एक इकन्नी निकाली

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

कि...मगर वैसे ही बग़ल से एक बङ्गालिन मज़दूरनी चमक कर धक्का देती हुई निकल गयी। मैं एकदम दीवार से भिड़ गया। ज़रा सम्भलना चाहता था कि पीछे से झूमता हुआ एक मस्त सांड़ आ धमका। लपक के तेज़ी में जो आगे बढ़ना चाहा तो दीवार में लगी हुई कील ने इस नाचीज़ पर ऐन इनायत की। चररर-चर्र से क़मीज़ की बांह ने अपना दरवाज़ा खोलकर फटी बनियाइन की बांकी झांकी लोगों को ठीक उसी तरह दिखाना शुरू किया, जैसे कि हवा का तेज़ झोंका अक्सर काले देव की बेगमात के चेहरों का नक़ाब उलट कर लोगों को उनकी ख़ूबसूरती का कायल करना चाहता है। मैं आपसे अर्ज़ करूँ, कि ख़ुदा जाने कितनी हसरतों और तमन्नाओं को एक फ़क़त उस क़मीज़ में लपेट कर लखनऊ से कलकत्ता आया था कि इस एक नई क़मीज़ को पहन कर दिन भर मिलों में नौकरी की तलाश में घूमूँगा, शाम को टहलने जाऊँगा और रात को अपने ही हाथों सनलाइट-साबुन से उसकी मालिश किया करूँगा। मुर्ग़ी के लिये तकुए का घाव ही बहुत होता है। मेरी क़मीज़ का फट जाना और अवध के कन्हैया नवाब वाजिदअली शाह साहब से अँग्रेज़ों का उनकी तमाम सल्तनत का छीन लेना, बिलकुल एक ही वज़न की दो चीज़ें थीं।

पैदाइश, रहना-सहना ख़ास लखनऊ का ही ठहरा, अगर कहीं बनारस या मिर्ज़ापुर का असर होता, तो आप यक़ीन मानिये, उस पान वाले की ख़ैर न थी, जो कम्बख़्त दीवार में कील ठोके रहता है। नवाब साहब ने बड़े अफ़सोस के साथ मेरी तरफ़ देख कर हमदर्दी से भरे दो-चार अलफ़ाज़ कह दिये। ग़मगीन था ही, उनकी इस हम-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

दर्दी से हुब्बे-वतनी ने ज़ोर मारा। एकदम एक सेकेण्ड के लिये अपना दुख-दर्द भूल कर अपने शहर की तहज़ीब के ख़याल में ग़र्क हो कुछ यों ही बदहवास-सा हो गया। और क़मीज़ की बांह पकड़ कर उसी बदहवासी की हालत में जो आगे बढ़ा, तो नवाब साहब भी पलटे। मेरे एक हल्के-से धक्के से उनकी पतली ख़ुश्नुमा, नाज़ुक छड़ी हाथ से छूट कर गिर पड़ी।

क़सम खा के कहता हूँ, शर्म से पानी-पानी हो गया। "आह मुआफ़ फ़रमाइयेगा", कहकर मैंने लपक कर उनकी छड़ी उठाई, दामन से साफ़ किया, होंठों से चूमा और दोनों हाथों में रखकर उनकी तरफ़ झुका। झुक कर नवाब साहब ने छड़ी उठाई, शुक्रिया अदा किया और फिर फ़रमाया—" आपकी क़मीज़ फट जाने का मुझे निहायत अफ़सोस हुआ !"

उनके सामने कैसे कहता कि अफ़सोस की बस अब कुछ पूछिये मत। यहाँ तो दिल पर छुरियाँ चल रही हैं। मगर दिली जज़्बात को कलेजे पर हाथ रख के रोका और यों अर्ज़ किया—"अजी वाह, इस ज़री सी बात के लिये अपने दिल को रंज न पहुँचायें। कोई ख़ास बात नहीं। मैं जनाब की इस हमदर्दी के लिये शुक्रिया अदा करने की इजाज़त चाहता हूँ।"

बड़े तपाक के साथ नवाब साहब ने फ़रमाया —"वल्ला, आप भी..." फिर एक लहमे के लिये रुक कर ज़रा जोश के साथ कहा—" माशा अल्ला, क्या शीरीं ज़बान है, च्-हा-हा ! जनाब का दौलतख़ाना ?"

"ग़रीबख़ाना लखनऊ में है, बन्दापरवर !"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

बड़े जोश के साथ मेरा हाथ अपने दोनों हाथों में निहायत मुलायमित से दबा कर कहा—"ओहो! वल्ला, तभी मैं कहूँ कि यह लहजा, यह तर्ज़े गुफ़्तगू सिवा हमारे शहर के और कहां आ सकती है ? मगर भाईजान, ख़ूब मुलाकात हुई आपसे भी, आप यक़ीन मानियेगा, वल्ला आंखें तरस उठी थीं अपने हम-वतन को देखने के लिये !"

निहायत अदब के साथ मैंने अर्ज़ किया—"हें-हें-हें मुआफ़ फ़रमाइयेगा, हुज़ूर यहाँ कहाँ तशरीफ़ रखते हैं ?"

"बन्दा यहाँ ज़करिया स्ट्रीट पर क़याम करता है। बात यह है कि मैंने आपसे अर्ज़ किया न, कि जानआलम नवाब वाजिदअली शाह साहब, ख़ुदा उन्हें जन्नत बख़्शे, मेरे परबाबाजान थे। जी हाँ! और अब एक तरह से आप ख़याल फ़रमाइये कि यहीं का बाशिन्दा हूँ। इधर हाल में ही कोई तीन-चार महीने का वाक़्या है, लखनऊ गया था; मगर साहब, सच तो यह है कि वहाँ जाकर अब जी भर आता है। कहाँ तो अपना शहर; अपनी हुकूमत ! आप यक़ीन मानियेगा, वहाँ जाकर मैं फूट फूट कर रोया। सब-कुछ लुट गया जनाब, आह !" नवाब साहब कुछ देर के लिये शोक में डूब गये।

मुझे अपनी फटी हुई क़मीज़ का जो ध्यान आया तो दिल गलेगले भर आया। निहायत अफ़सोस के साथ एक सर्द आह खींचकर अर्ज़ किया—"अरे, वह दिन हवा हुए, जब पसीना गुलाब था। आह ! क्या-क्या अरमान थे, कितनी हसरतें थीं ! सारी रियासत तबाह हो गयी। मगर अब क्या ? एकदम मजनूं की तरह घूम रहे हैं। कहाँ तो ये हालत थी कि अरबों का कपड़ा उठा कर ग़रीबों को बाँट दिया

तु०—८

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

और चेहरे पर शिकन तक नहीं, और कहाँ आज यह हालत है कि बस अब कुछ पूछिये मत। जिसकी जैसी इज़्ज़त है, वही बनाये बैठे हैं। मगर अब ख़ुदा की मर्ज़ी में चारा क्या है ? जिसकी इज़्ज़त उसने लूट ली, हम तो कहते हैं, भाई लूट लो। तुम्हीं ने बख़्शी थी, अब वापस ले रहे हो। ख़ैर, तुम्हारी मर्ज़ी !" कह कर मैंने फिर एक सर्द आह खींची।

नवाब साहब ने बात पलटते हुए कहा—"लखनऊ में आप किस जगह तशरीफ़ रखते हैं ?"

"फ़िदवी पाटेनाले पर आपके ज़ेर साये परवरिश पाता है।"

"क्या फ़रमाया आपने, पाटेनाले पर ? पाटेनाले पर तो मेरे मामूज़ाद भाई भी रहते हैं। ग़ालिबन् आप उनसे वाक़िफ़ भी हों। जनाब फ़रज़न्द अली साहब उनका इस्म-मुबारक है।"

हलफ़ उठाकर कहता हूँ, इस नाम को अपनी ज़िन्दगी में पहली ही बार सुना था। वजह यह थी कि पाटेनालेवाला अपना ज़ाती मकान जब खण्डहर हो गया, तभी से वालिद बुज़ुर्गवार साहब मय अपने बाल-बच्चों के मुफ़्तीगञ्ज में एक किराये के मकान में उठ आये थे; मगर अब इस वक़्त तो अपनी, अपने बाप-दादों के बड़प्पन की और नवाब साहब की शान रखनी थी। लिहाज़ा चट से बोल उठा—"बख़ूबी जानता हूँ, साहब। और सच तो यह है कि नवाब साहब के यहाँ हीं मेरी चौबीस घण्टे की बैठक है। च्-हा-हा-हा, अल्ला ताला ने क्या नेक तबीयत उनको बख़्शी है ! वाह-वाह ! ख़ुदा उन्हें सलामत रक्खे, बड़े ही ज़िन्दादिल आदमी हैं वह भी।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

नवाब साहब ने एक बार फिर बड़े जोश के साथ मेरा हाथ दबाया और बोले—"ओहो, तब तो आप मेरे अज़ीज़ हैं। जनाब का इस्म-शरीफ़ ?"

"ख़ाकसार को 'तस्लीम' लखनवी कहते हैं।"

"अक्खा, आप ही तस्लीम साहब हैं। जनाब से नियाज़ हासिल करने का तो एक अर्से से इश्तियाक़ था। और फ़रज़न्द भाई तो आप की इस क़दर तारीफ़ करते थे कि बस ! यक़ीन मानियेगा, सचमुच इस वक्त तो तबीयत ख़ुश हो गई भाईजान ! वल्ला देखिये, ख़ुदा की मर्ज़ी ! च्-हा-हा-हा। भई फिर कहूँगा कि ख़ूब मिले भाईजान ! जिन दिनों मैं लखनऊ गया हुआ था, शायद आप वहाँ तशरीफ़ नहीं रखते थे।

"जी हाँ, आपका फ़रमाना बजा है। उन दिनों देवें-शरीफ़ का मेला था, वहीं मुशायरे का इन्तजाम भी था और आपका यह ग़ुलाम उस जल्से की सदारत के लिये गया था, वरना वहीं आपसे दीदार हासिल हो जाता।"

"और कहिये फ़रज़न्द भाई तो मज़े में हैं न ?"

"जी हाँ, सब अल्लाह का शुक्र है। आपको अक्सर याद किया करते हैं।"

नवाब साहब हंसते हुए बोले—"अरे जनाब, हम लोग तो हम-प्याला और हम-निवाला हैं। आपको शायद मालूम भी हो, भाईचारे से ज़ियादा हम लोग एक दूसरे के जिगरी दोस्त हैं। और कहिये उनका लख़्तेजिगर महमूद तो मज़े में है न ? बड़ा शरीर लड़का है।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

"जी हाँ, बड़ा शरीर; मगर आप यक़ीन मानिये कि मेरा बड़ा अदब करता है। जी हाँ।"

"और वो अब्बासी महरी? भई बड़ी नेक है।"

"जी हाँ क्या कहने हैं उसके भी। ग़ज़ब का इख़लाक़ है और ऐसी पुर-मज़ाक कि वाह! मैं कलकत्ते आने लगा तो ताँगा रोक के बोली, मेरे लिये मुर्शिदाबादी साड़ी लाइयेगा। देखिये, भूलियेगा मत।"

"और उनका लाल बटेर! आपको मानना होगा साहब, कि उसकी जोड़ का लखनऊ में दूसरा न मिलेगा।"

निहायत अफ़सोस के साथ साँस लेकर मैंने कहा—"अरे जनाब, बस अब कुछ अर्ज़ नहीं किया जाता। कलेजा मुँह को आ रहा है। आज कोई आठ रोज़ हुये, अल्लाह करे उस कम्बख़्त बिल्ली को जहन्नुम में भी कीड़े नोंच नोंच कर खा जांय। खुदा की मर्ज़ी, उसी के हाथों उसे जन्नत बदी थी!"

एकाएक चौंककर नवाब साहब ने फ़रमाया—"अरे, यह आप क्या फ़रमा रहे हैं? हाय-हाय बड़ा प्यारा जानवर था। अब तो उसका चेहरा आंखों के सामने नाच रहा है। क्या नोकीली चोंच थी। और साहब, क्या मस्तानी अदा थी उसकी भी। ख़ैर साहब, जब आप लखनऊ तशरीफ़ ले जायँ, तो मेरी तरफ़ से फ़रज़न्द भाई को दिलासा दीजियेगा। उन्हें बड़ा अज़ीज़ था। हरदम चाटा ही करते थे उसे।"

एक-दो मिनट तक चुप रहने के बाद नवाब ने दोनों हाथों से छड़ी को कमर के पीछे रख, पान की गिलौरी को एक गाल से दूसरी तरफ़ फेरते हुये कहा—"और सुनाइये साहब, और हाल-चाल क्या हैं?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

मैंने भी उसी तरह निहायत इतमीनान के साथ जवाब दिया—"और सब अल्लाह का शुक्र है, आपकी नवाजिश है।"

"लखनऊ में शायद आप अच्छन टाँगेवाले को भी ज़रूर जानते होंगे। जनाब, ऐसा ज़बर्दस्त पेंच लड़ाने वाला आपको ज़रा कम मिलेगा। च-अहा-हा! अभी हाल ही में जब मैं लखनऊ गया था, फ़रज़न्द भाई ने कहा 'मियाँ इसका भी पेंच देखते जाओ।' हमने हँस कर टाल दिया कि क्या खाकर कोई अब लखनऊ में कनकव्वा उड़ायेगा? कहाँ तो साहब यह हाल था कि आप यक़ीन नहीं लायेंगे, मेरे वालिद साहब मरहूम ने एक बार हुसेनाबादवाले लड्डन नवाब से मैदान बदा। आप यक़ीन मानें, आँखों देखी बात अर्ज़ कर रहा हूँ। वो वो पेंच लड़े थे, कि बस आप से क्या अर्ज़ करूँ। सारा शहर खड़ा-खड़ा देख रहा था। और साहब लड्डन नवाब ने जो झल्लाकर पौनतावा ज़न्न से मैदान में उतारा तो बस सारा शहर एक मुँह से यही कह उठा कि भाई बाज़ी इस बार लड्डन नवाब के हाथ रहेगी। मगर वाह रे मेरे अब्बा जान! ख़ुदा उन्हें जन्नत बख़्शे; तीन दिन और तीन रात तक वह ऐसा नचाते रहे कि बस अब आप से क्या अर्ज़ करूँ। देखनेवालों ने अपनी-अपनी उँगलियाँ काट लीं। और फिर चौथे दिन उन्होंने नवाब लड्डन को छका कर वो कन्ने पर से लपेट मारी है कि पौनतावा सर-से ग़ायब। यानी कि आप यक़ीन मानें, बड़े-बड़े सिन-रसीदा बुज़ुर्गवार भी कह उठे कि भाई ऐसे पेंच तो हमने ज़िन्दगी भर नहीं देखे थे।'

गर्ज़ कि बातें करते करते हम लोग ज़करिया स्ट्रीट तक पहुँचे ही

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

थे कि एकाएक इस ज़न्नाटे से पानी आया कि बस आप से क्या अर्ज़ करूँ। हम लोग एक दूकान के बरामदे के नीचे खड़े हो गये। अनक़रीब पन्द्रह मिनट तक हम लोग वहीं खड़े रहे। आख़िरकार नवाब साहब ने ऊब कर कहा––"आइये जनाब, अब हम लोग यहाँ कब तक खड़े रहें? इसी बिल्डिङ्ग के तीन तल्ले पर मेरे एक अज़ीज़ रहते हैं। चलिये तब तक वहीं आराम किया जाय।"

यह कहते हुये नवाब साहब आगे बढ़े, मैं भी उनके पीछे ही पीछे चला। दो तीन सीढ़ी घूम कर एक कमरे के दरवाज़े पर खड़े हो नवाब साहब ने आवाज़ लगाई—"अमां बच्छन हैं?"

अन्दर से एक लड़के ने जवाब दिया—"जी, आ रहा हूँ अब्बाजान।"

निहायत ग़ुस्से में नाक भौं सिकोड़ कर नवाब साहब ने अपनी छड़ी दरवाज़े पर ठोंक कर कहा—"लाहौलविलाक़ूवत्! अबे चुप।"

बच्छन ने दरवाज़ा खोलते हुये नवाब साहब से कहा––"ऐ अब्बा, आज ज़री चुपके-से रहियेगा, अम्मीजान आज बड़ी ख़फ़ा हो रही हैं।"

मैं नवाब साहब के पीछे खड़ा हुआ था, इसलिये पहली झलक में में बच्छन शायद मुझे देखा न पाया। नवाब बच्छन साहब छः पैबन्दों से जुड़ा हुआ मैला पाजामा पहने हुये, नङ्गे बदन, गले, और बाहों में आठ दस गण्डे-तावीज बाँधे खड़े थे।

नवाब साहब ने झल्ला कर फ़रमाया—"अबे चुप, अम्मीजान का बच्चा कहीं का। मैं क्या कोई तेरा सचमुच का बाप हूँ?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

एकाएक घर से एक तेज़ आवाज़ सुनाई पड़ी—"ऐ, मैं कहे देती हूँ जो तुम मुझे इस तरह से कोसोगे तो अच्छा न होगा। ऐ-हाँ, ये तुम्हारे लड़के नहीं हैं तो कहीं ग़ैब से आये हैं ?"

नवाब साहब खड़े-खड़े मारे ग़ुस्से के काँप रहे थे, कि अन्दर से रोते हुये बेगम साहबा ने फ़रमाया—"उई मेरे अल्लाह, तुमने मुझे कैसी आफ़त में फँसा दिया। तीन तीन दिन से फ़ाक़े करो और ऊपर से ये गालियाँ सुनों......।"

नवाब साहब ग़ुस्से में खड़े तिलमिला रहे थे, कि मैंने उनकी पीठ पर निहायत मुलायमियत के साथ हाथ रख अर्ज़ किया—"अच्छा अब इजाज़त दें। मुझे ज़रा एक काम है। फिर कभी—"

नवाब साहब ने झेंपते हुये मेरा हाथ पकड़ कर निहायत खिसियायी हुई आवाज़ में कहा—"जाइयेगा ? अच्छा · · · देखिये कुछ ख़्याल न कीजियेगा हज़रत।"

सीढ़ी तक मुझे पहुंचाने आकर नवाब साहब ने धीरे से कहा—"क्या बताऊँ हज़रत, ग़रीब समझ कर मैंने इसे पनाह दी, अपनी बीवी की तरह रखता हूँ, मगर।"

बात काट कर, हाथ छुड़ाते हुये मैंने अर्ज़ किया—"मैं सब समझता हूँ; लेकिन आप मेरी तरफ़ से इतमीनान रक्खें।"

कहते हुए मैं नीचे उतर आया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

दुबले-पतले शरीर पर बड़ी-सी खोपड़ी में खमदार भौंहों पर ख़ुमारी से भरी हुई झुर्रीदार आँखें ठीक ऐसी ही मालूम होती हैं जैसे कि गोबर के पुतले पर टेढ़ी-मेढ़ी दो कौड़ियाँ जड़ दी गई हों।

छितरी हुई मूछें – सन सी सफ़ेद --पोपले मुँह की रौनक़ बढ़ा रही हैं। बाअदब, बाक़ायदा—उर्दू और फ़ारसी तो जैसे उनके ख़ान्दान की लौंडी थी। हरएक से 'अलेक-सलेम' की पाबन्दी—बाबूजी, भैयाजी, लालाजी, 'अख़्वाह! जैराम जी की। कहिये मिज़ाज तो शरीफ़, बाल-बच्चे सब ख़ैरियत से हैं न!' गरज़े कि मुन्शीजी शराफ़त के जीते-जागते पुतले हैं।

बक़ौल मुन्शीजी, वह एक आला-ख़ानदान के टिमटिमाते हुये चिराग़ हैं। बाबाजान महाराज सोनागढ़ के मुख़्तार-आम थे, वालिद बुज़ुर्गवार की तमाम ज़िन्दगी भी उस गद्दी पर ही तमाम हो गई। आप

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

पर भी उस पुश्तैनी गद्दी को रौनक़-अफ़रोज़ करने के लिये काफ़ी ज़ोर डाला गया था, लेकिन उसके पहले ही आप अपनी रंगीन तबीयत की गुलामी मंज़ूर कर चुके थे, इसलिए मजबूरी थी; महाराज आपके ख़ानदान की काफ़ी क़द्र करते थे। और वकील मुन्शीजी, आपको तो वह अपने वली-अहद से भी ज़्यादा प्यार करते थे। एक बार का ज़िक्र है कि महाराज आपको अपने पास बिठाये हुये प्यार से बातें कर रहे थे उसी वक्त़ राजकुमार साहब भी तशरीफ़ लाये, लेकिन महाराज ने उनकी तरफ़ तवज्जह भी नहीं की। मुन्शी जी फ़रमाते हैं कि इस बात पर महाराज और महारानी में कुछ—योंही मामूली सी—कहासुनी भी हो गई थी। आपकी शादी के मौक़े पर महाराज की तरफ़ से रहने के वास्ते एक आलीशान कोठी, आठ नौकर, चार बाँदियाँ, दो दरबान, एक हाथी और न मालूम कितनी चीज़ें बख़शीश में मिली थीं।

अलावा इसके और भी बहुत सी बातें हैं जो कि आप ही के शब्दों में, 'फ़क़त एक अफ़साना है। जिन्हें सुनने से कोई फ़ायदा नहीं। क्यों कि आज-कल के नौजवान अंग्रेज़ीदां बाबू लोग उन्हें महज़ चण्डू-खाने की ग़प समझकर हँसी उड़ाते हैं।'

मुन्शी जी अभी कमसिन हैं। यही कोई साठ-पैंसठ की उम्र होगी, जो कि शादी का सवाल उठने पर चालीस हो जाती है, और वैसे तो ग़दर में आप बाईस बरस के पट्ठे ही थे। उसी सिलसिले में आपकी तमाम शानोशौकत कम्बख़त बलवाईयों के क़ब्जे में चली गई। उस लूट का भी बड़ा दर्दनाक क़िस्सा है। पूछने पर ठन्डी साँस ले कर,

Digitized by eGangotri

कुरसी के पीछे की तरफ़ अपना सिर डालते हुए, छत की कड़ियाँ गिन-गिन कर, रुक-रुक कर, धीरे-धीरे फ़रमाते हैं--"क्या बतायें साहब, क्या हाल था। बस खिड़की से बाहर एक बार झाँकिये—चारों तरफ़, लाशें ही लाशें नज़र आती थीं—एक चिड़िया का बच्चा भी उड़ता हुआ नज़र नहीं आता था। ऐसा मालूम होता था जैसे भूतों के परिस्तान आ गये हों।" यहाँ पर मुन्शीजी एक क्षणके लिये अपनी कथा कहना बन्द कर हँसती हुई आँखों से सीना बाहर की ओर निकाल कर श्रोता की ओर देखेंगे। इतने पर भी 'ज़ुल्म है गर दो सखुन की दाद।' मुन्शी जी का 'मूड' ख़राब हो जाता है। फिर साफ़ कह देंगे—"देखा न, बाबू साहब, मेरी गुस्ताख़ी माफ़ कीजियेगा, मैं पहले ही अर्ज़ कर चुका था कि आप लोग मेरी बातों पर यक़ीन नहीं लायेंगे। और परमेशुर न करे, आपको इन दर्दनाक बातों पर यक़ीन आये ही क्यों—यह तो जिस पर बीतती है वही जानता है। देखिये, माफ़ कीजियेगा। बुरा मानने की कोई बात नहीं। जो मैंने आप लोगों की शान में कहा इसमें अगर ज़र्रा बराबर भी झूठ हो तो फ़िदवी का सर हाज़िर है! हाँ बाबू साहब!"

परन्तु यदि उसी वक्त श्रोता ने समझदारी से काम लेकर चट से कह दिया—"वाह, यह भूतों के परिस्तान की एक ही कही। भई ख़ूब!" मुन्शी जी तब मुस्करा कर झुक कर सलाम करते और दो-चार मीठी मीठी बातें (हें:-हें:हें: के साथ लपेट कर) शुकराने के तौर पर पेशेनज़र कर देते।

गाड़ी फिर आगे बढ़ती—

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

"हाँ जनाब, तो मैं क्या अर्ज़ कर रहा था ?......हाँ, ठीक, याद आया । जी मैंने कहा—कि क्या बतलाऊँ, महलसरा में रोना-पीटना मचा हुआ है, घर में सब लोग राम-राम का कुहराम मचाये हुए हैं । आप यक़ीन मानिये बाबूजी कि एक अकेला मैं ही हाथ में तलवार लिये हुए कमरे में चहलक़दमी करता हुआ मल्हार गा रहा था ।"

"ओफ़-ओह ! बड़े गज़ब का दिल पाया है, आपने मुन्शी जी ! वाह, मुसीबत के वक़्त भी मल्हार !"

मुन्शी जी फिर कहना शुरू कर देते—"बस जनाब, वह क़यामत का दिन भी आ गया, जिसकी इन्तज़ारी थी । सदर फाटक पर चोटें पड़ने लगीं । घर में सब लोग रोने चिल्लाने लगे । इतने में बलवाई घर में घुस आये । मैंने उनका मुक़ाबिला किया, लेकिन कहाँ वह पचास और कहाँ मैं एक अकेला । लूटा-खसोटा, मारा-पीटा ।......सब तबाह कर दिया । मुझे उस वक़्त रुपये-पैसे, हीरे-जवाहरात किसी की फ़िक्र न थी, महज़ अपनी जान--जान से ज़्यादा प्यारी चीज़, दो सौ बरस की पुरानी हाथ से लिखी हुई किताब को इन जाहिलों के हाथ से बचाने के लिये अपने तोशेख़ाने की ओर दौड़ा हुआ गया । ..तब से, जनाब, यह हालत हो गई, वरना हम भी आदमी थे शान के । आह !"

मुन्शी जी के साथ-साथ सुनने वाले के लिये भी यह आवश्यक है कि दो-तीन लम्बी-लम्बी सर्द आहें खींचकर, एक मिनट के लिये गर्दन लटका कर मौन हो रहे ।

मशहूर कहानीलेखक बाबू गोविन्दबिहारी खरे के मकान पर एक दिन दोस्त-अहबाब की दावत थी । 'भोग' जी, 'मुनि' जी,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

'सागर' जी आदि बड़े-बड़े साहित्य-महारथी भी पधारे हुए थे। मुन्शीजी भी दावत में शरीक़ होने के लिये बुलाये गये थे।

"अक्ख़ाह! मुन्शीजी हैं! आइये आइये।" खरे जी ने तपाक के साथ उठकर उनका स्वागत किया। 'मुनि' जी आदि भी राम-जुहार करने लगे। मुन्शी जी उस समय प्रसन्न मन दिखाई पड़ रहे थे।

खरे जी ने सागर जी से मुन्शी जी का परिचय कराते हुए कहा—"देखिये साहब आप ही के पास वह तीन-सौ बरस की पुरानी किताब है जो कि आपके बाबाजान ने लिखी थी।"

और फिर मुन्शीजी ने कहा—"आप कलकत्ते से उसी किताब को ख़रीदने के लिये आये हुए हैं।"

"अच्छा! बड़ी खुशी हुई आपके नियाज़ हासिल कर।" मुन्शी जी ने तपाक के साथ उठ कर उनका हाथ अपने दोनों हाथों में दबाकर सिर से लगा लिया।

सागर जी को पहले इसका कुछ भी इतिहास नहीं मालूम था, फिर भी उन्होंने उपरोक्त बातचीत के आधार पर अपना 'पार्ट' अच्छी तरह से समझ लिया। उन्होंने कहा—"यक़ीन मानिये, मुझे भी आपसे मिलकर बड़ी खुशी हुई। परसों खरे साहब का ख़त पहुँचा, उसमें आपकी और उस किताब की काफ़ी तारीफ़ लिखी हुई थी। मैंने वह चिट्ठी म्यूज़ियम के अफ़सरान को भी दिखलाई और उन्होंने कहा कि फ़ौरन जाकर किताब ख़रीद लो—हज़ार-दो हज़ार जितने में भी मिले।"

मुन्शीजी गद्गद् हो रहे थे।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

सागर जी ने फिर कहा—"अच्छा तो वह किताब आपके बाबाजान ने लिखी है।"

"जी हाँ, तीन सौ बरस पुरानी वह किताब है बाबूजी ! खते-विलायत में सारी किताब लिखी गई है। उसमें कुछ तो मेरे बाबाजान ने लिखा है, कुछ वालिद बुज़ुर्गवार ने और कुछ इस ख़ाकसार ने।"

"अच्छा !"

"जी हाँ।"

"देखिए गुस्ताख़ी माफ़ कीजिएगा, उसका कुछ मज़मून बतलाने की मेहरबानी कीजिए। क्योंकि आप तो जानते ही हैं, सरकारी काम है······।"

सागर जी की बात पूरी भी न हो पाई थी कि मुन्शीजी नम्रता-पूर्वक कह उठे—'सब समझता हूँ बाबूजी। लेकिन इसमें गुस्ताख़ी की क्या बात ? हें:-हें:, आप तो शरमिन्दा करते हैं। जी हाँ, तो मैं क्या अर्ज़ कर रहा था ?···याद आया मज़मून। नज़्में हैं, कुछ हिकमत के अजीबो-ग़रीब नुस्ख़े हैं, शाइस्ता मज़ाक़ हैं—वग़ैरह वग़ैरह।'

"अच्छा ! बहुत-ख़ूब !! आपको उसमें से कुछ याद हो तो सुनाइए।

"जी हाँ, शौक़ से।"

खरे साहब ने वैसे ही टोका—"भाई, यों ख़ाली ज़बानी जमा-ख़र्च ठीक नहीं। आप उन्हें लिख भी लीजिए और उसे ही दिखाकर अपने

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

अफ़सरों से राय भी ले लीजिएगा। इतनी क़ीमती किताब मुंशीजी यों ही उठाकर थोड़े दे देंगे।"

मुंशीजी ने भी इसका समर्थन किया।

सागर जी लिखने बैठे।

दोज़ानूँ हो, झूम-झूम कर मुन्शी जी ने कहना शुरू किया—

"हलवाइयाँ शीरीं लक़ब
फ़रहाद की थी उसको तलब—
चाशनी करती थी ग़ज़ब—
मुख मोर के मुस्कात है।"

लोग बड़ी मुश्किल से हँसी रोके हुये थे। आख़िर खरे जी ठठा कर हँस पड़े।

बड़ी नाराज़ी के साथ त्योरी चढ़ाकर मुंशी जी ने कहा--"यह कहानी लिखना नहीं है, फ़ारसी है फ़ारसी! तुम क्या समझो मियाँ?"

इस पर वह कहकहा लगा कि आसमान हिलने लगा।

अगर उस वक्त़ खाना-पीना न होता तो मुंशीजी अवश्य ही उठ कर चले जाते।

दावतों और महफ़िलों में शरीक होने का मुंशीजी को मर्ज़ है। एक बार आप उनसे झूठे ही कह दीजिए, फिर मुंशीजी की 'इन्सानियत और शराफ़त' इस बात को क़तई गवारा नहीं कर सकती कि आपके निमंत्रण को नामंज़ूर कर आपके दिल को दुःख पहुंचाएँ।

चाँदनी रात थी। खरे जी आदि की इच्छा नौका-विहार करने की हुई, लेकिन साथ में एक ज़िंदादिल आदमी की ज़रूरत थी। उस

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

दिन मुंशी जी को किसी भले आदमी ने ताड़ी के सहारे ताड़ की फ़ुनगी पर बैठा दिया था। मुन्शीजी को किसी सूरत से नाव पर लादा गया। नाव खोल दीगई। यार लोग राग और रागिनी के शुभ-विवाह के पुरोहित बन बैठे। मुन्शीजी को बहुत काफ़ी उकसाया, परन्तु वह चुपचाप ही बैठे रहे। बहुत भड़काने पर फिर उन्होंने दम पर दम ठेका लगाना शुरू किया, "भैया, मुनासिब तो यही है कि आप मुझे मेरे घर पहुंचा दें।"

किसी महापण्डित से यह आशा की जा सकती है कि वह लगातार मंत्र जपते-जपते भी एक बार गोमुखी से हाथ निकाल कर दत्तचित्त हो जनेऊ से पीठ खुजलाने लगे, लेकिन मुन्शीजी बिना रुके ही, नशे की पीठ को चाबुक से धुनते हुये, बार-बार, बराबर, यही कहते रहे—"भैया, मुनासिब तो यही है कि आप मुझे मेरे घर पहुँचा दें।"

सारा मज़ा उस दिन क़िरकिरा हो गया। नाव फेरनी ही पड़ी। उस दिन उन लोगों ने मुन्शी जी को गालियाँ दीं इतनी! शायद मुन्शी जी के बुज़ुर्गों को महाराज के यहाँ से इतनी बख़्शीश भी कभी न मिली होगी।

मुन्शी जी घर आते ही आते दो बार दरवाज़े से टकरा कर गिरे, तब कहीं जाकर ताला खुला। आपका दौलतख़ाना एक विशेषता रखता है—बस समझ लीजिये कि इतिहास-प्रसिद्ध कलकत्ते की काली कोठरी से कुछ 'बीस' है। इससे अधिक नहीं। वहीं आपका दीवानख़ाना, ग़ुस्लख़ाना, रसोई, महलसरा सब कुछ है। बांस की एक चारपाई, जो किसी ज़माने में एक 'महाबाम्हन' से शायद आठ आने

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

की ख़रीदी थी और उस पर चारपाई के अनुरूप ही बिछावन । चीड़ के बक्स में उनकी गृहस्थी थी । मुन्शी जी ताव में थे—

"साले गाली देते हैं । जैसे हम इनके क़र्ज़दार हैं । ले जाओ, उठा ले जाओ । माल मुंशी घिर्राऊलाल का, दिल बेरहमों का । कुछ परवाह नहीं—किसी का नहीं रक्खेंगे ।"

सब गृहस्थी लुटा कर मुंशी जी गर्म हो रहे थे । एक मजमा इकट्ठा हो गया था । मुंशी जी मुहल्ले के नामी 'अनाथों' में से हैं न !

उसी समय एक वृद्ध सज्जन उधर से निकले, मुंशी जी की हालत देख कर बोले—'साले का बाप भी इसी बीमारी में मरा था ।'

तमाशाइयों में से एक ने पूछा—"क्या आप उनके बाप को जानते थे ?"

"जी हाँ, वह महाराज सोनागढ़ का हुक्क़ाबरदार था ।"

Sri Pratap Singh
Library
Srinagar.

SPS
891.433 A 47 T

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE